



हिन्दी  
अर्धमागधी रीडर

अर्थात्  
जैन प्राकृत प्रवेशिका

( प्रथम भाग )



लेखक

वनारसीदास जैन एम० ए०

ओरियंटल कालेज, लाहौर.

( सम्पादक तथा अनुवादक, "स्वप्नवासवदत्तम्" )

मिशन प्रेस अलाहाबाद में छपी

धीर सं० २४४७

विक्रम सं० १९७७

( सर्व अधिकार ग्रन्थकर्ता के स्वाधीन )

प्रथमावृत्ति ५०० प्रति ]

[ सू० ६० ११ ]

हिन्दी अर्धमागधी रोडर के प्रथम भाग का

## विषयानुक्रम

—:०:—

समपूर्ण पत्र, चित्र श्रीमान् ए० सी० बूलनर साहित्य का	...	...	...	आदि में
प्रस्तावना	...	...	...	अ
हिन्दी व्याकरण	...	...	...	क—व
अर्धमागधी व्याकरण	...	...	...	थ—ह
षष्ठ पाठ	...	...	...	
मियापुत्ते दारद	...	...	...	१
उसम निव्वाण	...	...	...	१०
मेहे कुमारे	...	...	...	१३
हिन्दी अनुवाद	...	...	...	
मृगा पुत्र बालक	...	...	...	३३
प्रथम भगवान् का निर्वाण	...	...	...	४३
मेघ कुमार	...	...	...	४६

मिलने का पता:—

शुभ चन्द जैन, संगूर ( जींद स्टेट )

Khub Chand Jain, Sangrur.





नियगुह्यं आयरियवराणं सिरि

आल्फ्रेड् कूपर् वूलनर्

ALFRED COOPER WOOLNER

नामधिजाणं लोपुरतय-पाईणमहाविज्ञालयजम्भवाणं  
सव्याइ हियकिच्चाइ सरिप्ता तेसि करकमलेसु  
ससिणेहं समप्पियं पोत्थयं षयं

विणीपणं सीसेणं

वनारसीदासेणं



# प्रस्तावना



अप्रैल सन् १९१७ में स्वा० श्वे० जैन कानफ्रेन्स लाहौर में भरी । उस में श्रीमन् प० सी० वूल्वर भी पधारे थे । उन्होंने अपने पण में बतलाया था कि योरुप में जैन साहित्य का प्रचार बौद्ध साहित्य के प्रचार की अपेक्षा इस लिये कम है कि जैन साहित्य प्रायः अर्धमागधी प्राकृत में है और अर्धमागधी प्राकृत सीखने के लिये कोई पाठ्य किताब या रीडर मौजूद नहीं जैसा कि बौद्ध साहित्य पढ़ने के लिये पाली भाषा के कई व्याकरण और रीडरें मौजूद हैं ।

उस समय में पंजाब यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी के लिये बहुत से जैन ग्रन्थ खरीद कर चुका था और बाकी खरीद कर रहा था, इस लिये मैंने उसी साल अगस्त मास में श्रीमान् वूल्वर साहब से प्रार्थना की कि अपनी लाइब्रेरी में साधन काफी हो गये हैं इस लिये आप एक "अर्धमागधी रीडर" लिख कर जैन जाति तथा अन्य विद्या प्रेमियों की इच्छा को पूर्ण कर दीजिये ! इस पर अकतूबर में साहब बहादुर ने मुझे फरमाया कि "तुम अर्धमागधी रीडर लिखना आरम्भ कर दो । हम इसको शुद्ध करके यूनिवर्सिटी की ओर से छपवा देंगे ॥ "

साहब बहादुर की आज्ञानुसार मैंने रीडर लिख कर अकतूबर सन् १९१६ में उनके सामने पेश की । उन्होंने उसे स्वीकार कर लिया और वह यूनिवर्सिटी की ओर से लाहौर में छपने लगी । परन्तु लाहौर में मूलपाठ के केवल ३२ पृष्ठ छपे थे कि छापेखाने की गड़बड़ होने से काम बन्द करना पड़ा । वह ३२ पृष्ठ साहब बहादुर की आज्ञा लेकर इस पुस्तक में लगाए गये हैं और यूनिवर्सिटी की रीडर के लिये फिर से छप रहे हैं ॥

पिछले चौमासे में उपाध्याय श्री आत्माराम जी के पास दिहली से एक पत्र आया कि जैन सूत्र पढ़ने के लिये व्याकरण का कौनसा



पुस्तक पढ़ना चाहिये, महाराज जी ने मेरी सम्मति पूरी। मैंने कहा कि काल में तो जैन प्राकृत गीतने के लिये संस्कृत के अतिरिक्त दूसरा कोई साधन नहीं। संस्कृत सीख कर आचार्य श्रीदेवचन्द्र का प्राकृत व्याकरण पढ़ कर श्रीका आदि की सहायता से जैन प्राकृत अर्थात् अर्धमागधी सीखी जा सकती है। तब महाराज जी ने कहा कि यदि धर्म जी अर्धमागधी गीत के संग पर हिन्दी अर्धमागधी गीत लिखा जाए तो अच्छा है सुनानि जग की प्रेरणा से यह गीत तय्यार हो गये हैं।

मैंने पाठ लिखने के लिये मैंने उपाध्याय श्री आत्मा राम जी से हस्तलिखित ग्रन्थ लिये थे। इस से मैं उनका अतीव अनुमद मानता हूँ। यह ग्रन्थ दृष्टो (मुजगता भागवत) वाले थे और उनके पाठ पूर्णतया शुद्ध न थे ॥

चूँकि यह मेरा पहिला प्रयत्न है और चूँकि इस पुस्तक का बहुत सा हिस्सा मुझसे एक हजार मील परे अर्थात् अनाहाबाद में गुया है इस लिये संभव है कि इस में मेरी अपनी अशुद्धियों के अतिरिक्त बहुत सी छापों की अशुद्धियाँ रह गई होंगी। अतः पाठक मुन्द से मेरी क्षमिन्त प्रार्थना है:—

यह निज मति अनुसार, रच्यो स्वर के पारम्पी।  
 बुध जन करे विचार, शोषे सगरी भूल मम ॥

ओरियंटल कालेज,  
 लाहौर  
 २६. ११. २०

गनारसी दास जैन

# अर्धमागधी शीडर

## हिन्दी व्याकरण

[ यह बात स्वतः सिद्ध है कि एक भाषा के व्याकरण को जानने वाला मनुष्य अन्य भाषाओं को घड़ी आसानी से सीख लेता है। इसलिये अर्धमागधी भाषा का व्याकरण लिखने से पहिले हिन्दी भाषा का संक्षिप्त व्याकरण दिया जाता है ताकि वह पाठक जन जिन्होंने कोई व्याकरण न पढ़ा हो वह इसे स्वयं विचार लें। इससे उनको अर्धमागधी का व्याकरण समझने में कोई मुश्किल न पड़ेगी ]

- १ भाषा—जिस उपाय के द्वारा प्राणी अपने मन का भाव एक दूसरे पर प्रकट करते हैं उसे भाषा कहते हैं; जैसे— बोलना, लिखना, इशारे करना, इत्यादि ॥
- २ भाषा दो प्रकार की होती है १ व्यक्त और २ अव्यक्त । व्यक्त भाषा केवल मनुष्यों की होती है और वह भी उस समय जब वह अपने मन का आशय सार्थक शब्द बोल कर या लिख कर प्रकट करते हैं। अव्यक्त भाषा पशु पक्षियों की है तथा मनुष्यों की है जब वह आंग्र या हाथ के इशारे से काम करते हैं।

व्यक्त भाषा	अव्यक्त (मनुष्यों की)	अव्यक्त (पशुओं की) ।
“मुझे प्यास लगी है पानी पिलाओ” ऐसा बोलना या लिखना ।	हाथों का पुट घना कर मुग्घ के पास ला कर इशारा करना ।	गाय धूल आदि का मांय मांय शब्द करना ।

ऊपर के कोष्ठक में एक ही आशय तीन उपायों से प्रकट किया गया है ॥ हमारा प्रयोजन यहाँ पर व्यक्त भाषा से है ॥

३ हिन्दी—यूँ तो भिन्न २ समय तथा देशों की भाषाएँ हिन्दी के नाम से पुकारी जाती हैं जैसे चन्द्र चरदाइ ( चन्द्र कवि ) छत पृथ्वीराज रासौ की हिन्दी, तुलसीदासछत रामायण की हिन्दी, बिहारीलाल छत बिहारी सतसरई की हिन्दी इत्यादि । परन्तु मेरा अभिप्राय हिन्दी कहने से उस भाषा से है जो सरस्वती, भारतमित्र आदि पत्रों तथा चन्द्रकान्ता आदि उपन्यासों में प्रयुक्त होती है ॥

४ व्याकरण उस विद्या का नाम है जिस से किसी भाषा के शुद्ध बोलने तथा लिखने का ज्ञान प्राप्त हो । हिन्दी व्याकरण के यह तीन अङ्ग हैं—१ वर्णमाला, २ शब्द प्रकरण, ३ वाक्य प्रकरण ।

## वर्णमाला

५ वर्णमाला व्याकरण का यह अङ्ग है जिस से वर्णों अर्थात् अक्षरों के उत्पत्ति स्थान आदि का ज्ञान हो ।

हिन्दी वर्णमाला के अक्षर

स्वर—अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ए ऐ ओ औ ।

व्यञ्जन—क ख ग घ ङ । च छ ज झ ञ । ट ठ ड ढ ण ।

त थ द ध न । प फ य भ म । य र ल घ । श ष स ह ।

° ( अनुस्वार ) : ( विसर्ग ) ।

६. लिखने के लिये जो अक्षरों के सङ्केत रखे जाते हैं उन्हें लिपि कहते हैं। इस पुस्तक की लिपि देवनागरी या नागरी कहलाती है।
७. स्वर दो प्रकार के होते हैं, अननुनासिक और अनुनासिक अननुनासिक स्वर केवल मुख द्वारा बोले जाते हैं; जैसे आज में 'आ', 'भोग' में ओ ( ी ); 'देवी' में ए ( े ) और ई ( ी ) अनुनासिक स्वर मुख और नासिका द्वारा बोले जाते हैं और लिखनेमें उनके ऊपर प्रायः चन्द्रबिन्दु का चिह्न ( ° ) दे देते हैं जैसे आँच में आँ, नींद में ईं ( ीं ) इत्यादि ॥
८. काल की अपेक्षा भी स्वरों के दो भेद हैं, १ ह्रस्व २ दीर्घ। ह्रस्व स्वर बोलने में थोड़ा समय लागता है—जैसे अ इ उ, अँ ईं उँ ॥ दीर्घ स्वर बोलने में अधिक समय लगता है; जैसे—आ ईऊ ए ऐ ओ औ, आँ ईं ऊँ एँ ओँ ॥ ह्रस्व स्वरों को लघु या छोटे भी कहते हैं। दीर्घ स्वरों को गुरु, लम्बे, या बड़े भी कहते हैं ॥
९. व्यञ्जनों के भी अनेक भेद हैं जैसे:—
- |                   |                                           |
|-------------------|-------------------------------------------|
| क ख ग घ ङ ...     | कवर्गीय या कर्ण्य कहलाते हैं              |
| च छ ज झ ञ ...     | चवर्गीय या तालव्य कहलाते हैं              |
| ट ठ ड ढ ण ...     | टवर्गीय या मूर्धन्य कहलाते हैं            |
| त थ द ध न ...     | तवर्गीय या दन्त्य कहलाते हैं              |
| प फ ब भ म ...     | पवर्गीय या ओष्ठ्य कहलाते हैं              |
| य र ल घ ...       | अन्तस्थ कहलाते हैं                        |
| श ष स ह ( : ) ... | ऊष्मन् कहलाते हैं                         |
| ङ ञ ण न म ( ° )   | अनुनासिक या नासिक्य कहलाते हैं, इत्यादि । |

१० स्वर के व्यवधान से रहित दो या दो से अधिक व्यञ्जनों का

सम्बद्ध संयुक्त अक्षर कटानाता है जैसे छ, प्र, रस, रक, छ्य  
इत्यादि ।

११ व्यंजन की आधी मात्रा, हानु स्वर की एक और गुरु स्वर की  
दो मात्राएं गिनी जाती हैं । यदि ह्रस्व स्वर के पाँच अक्षर, विसर्ग या कोई संयुक्त अक्षर हो तो यह गुरु गिना जाता है ॥  
इन्द्र शास्त्र में व्यंजन की मात्राएं गिनने में नहीं आती, केवल  
स्वरों की मात्राएं गिनते हैं, जैसे दोहों में २४ मात्राएं होती हैं ॥

२ २ २ १ १ २ १ २ २ १ १ २ १ २ १ = २४  
माला तो कर में फिरें, जीभ फिरें मुख मौहि ।

१ १ २ २ २ १ १ १ २ २ २ १ १ १ २ १ = २४  
मनषा तो चौदिस फिरें, पेंसां सुमरन नाहि ॥

कवीर

## शब्द प्रकरण

१२ शब्द प्रकरण में यह वर्णन होता है कि लिख बचन और विभक्ति  
के कारण शब्दों में २१ २ परिवर्तन होते हैं तथा एक प्रकार  
के शब्द से दूसरे प्रकार का शब्द किस तरह बनाया जाता है ॥

हिन्दी के शब्द पाँच हिस्सों में विभक्त हैं—१ संज्ञा, २ विशेष-  
ण, ३ सर्वनाम, ४ क्रिया ५ अव्यय ।

१३ संज्ञा—जो किसी जीव, वस्तु या स्थान का नाम हो जैसे राम-  
दास, गाय, घोड़ा, चौकी, रजोहरण आदि

१४ गुण तथा संख्या वाची शब्द विशेषण कहलाते हैं; जैसे काला  
नीला, शीत, उष्ण, पाँच, सात, आदि ।

१५ जो शब्द किसी संज्ञा के बदले रक्खा जाता है उसे सर्वनाम  
कहते हैं; जैसे रामदास यहाँ आया था वह (अर्थात् रामदास)  
किताब ले गया । यह मेरी चौकी है इस (अर्थात् चौकी) पर  
बैठो ॥

- १६ जो शब्द किसी काम के करने या देने को बतलावे उसे क्रिया कहते हैं; जैसे जाता है, लिखता था, पियेगा।
- १७ इनके अतिरिक्त अन्य सब शब्द अव्यय कहलाते हैं; जैसे अब, नव, आज, यहां, फिर, से तक।
- १८ एक व्यक्ति वाची शब्द को एकवचन कहते हैं; जैसे घोड़ा, प्याला, स्त्री, लड़की ॥ एक से अधिक व्यक्तियों की संख्या बतलाने वाले शब्द बहुवचन कहलाते हैं; जैसे घोड़े, प्याले, स्त्रियां, लड़कियां ॥
- १९ पुरुष वा नर वाची शब्द पुल्लिङ्ग कहलाते हैं, जैसे घोड़ा, लड़का, प्याला, मनुष्य ॥ स्त्री वा नारी वाची शब्द स्त्रीलिङ्ग कहलाते हैं; जैसे घोड़ी, लड़की, प्याली, स्त्री ॥
- २० एक वाक्य में किसी शब्द का क्रिया के साथ अथवा अन्य शब्द के साथ जो सम्बन्ध होता है उसे उस शब्द का कारक कहते हैं। हिन्दी में आठ कारक होते हैं; यथा—कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध, आधकरण, सम्बोधन ॥
- २१ क्रिया के करने वाले को कर्ता कहते हैं; जैसे राम जाता है, लड़की सोती है। यहां राम, लड़की कर्ता हैं ॥
- २२ क्रिया के फल को कर्म कहते हैं; जैसे राम पुस्तक पढ़ता है, सीता पानी पीती है। यहां पुस्तक और पानी कर्म हैं ॥
- २३ जिस के द्वारा क्रिया की जाती है उसे कारण कहते हैं; जैसे राम ने चाकू से कलम बनाई। यह पिनसल से लिखता है। यहां क्रिया के साधन चाकू और पिनसल कारण है ॥
- २४ जिसके लिये क्रिया की जाती है उसे सम्प्रदान कहते हैं; जैसे राम के लिए भोजन बनाओ। मुझे पुस्तक दे दो। यहां राम और मुझे सम्प्रदान हैं ॥

२५ जिस स्थान या हेतु से क्रिया प्रसरती है उसे अपादान कहते हैं, जैसे कूप से जल निकलता है। घृत्त से पत्ते गिरते हैं। यहां कूप और घृत्त अपादान हैं।

२६ सम्बन्ध कारक का क्रिया के साथ सम्बन्ध नहीं होता किन्तु दो संज्ञाओं में स्वामित्वादि सम्बन्ध की छांटन करता है; जैसे राजा का नौकर, राम की पुस्तक। यहां राजा का नौकर के साथ और राम का पुस्तक के साथ स्वामित्व सम्बन्ध है। राजा और राम स्वामी कहे जाते हैं और सम्बन्ध कारक में लिखे गए हैं। नौकर और पुस्तक उन के धन कहलाते हैं ॥

२७ जहां पर क्रिया की जाती है उसे अधिकरण कहते हैं; जैसे मैं घर में सोता हूँ, पुस्तक संदूक में रख दो। यहां घर और संदूक अधिकरण हैं ॥

२८ दूर से पुकारने या सावधान करने को सम्बोधन कहते हैं; जैसे हे राम ! इधर आओ। हे बालको ! अपना काम करो। यहां राम और बालको सम्बोधन हैं।

२९ हिन्दी में कारकों का बोध कराने के लिये शब्द के साथ कारकाव्यय लगाए जाते हैं। भिन्न २ कारकों के लिये भिन्न २ अव्यय लगते हैं ॥

कारक	कारकाव्यय
कर्ता ... ..	०, ने
कर्म ... ..	०, को
करण ... ..	से, द्वारा, करके
सम्प्रदान ... ..	को, के लिये-निमित्त, वास्ते
अपादान ... ..	से, में से
सम्बन्ध ... ..	का, के, की
अधिकरण ... ..	पर, में, बीच
सम्बोधन ... ..	हे, अरे, ओ

२० सम्बोधन में शब्द के पहिले, और अन्य कारकों में शब्द के पीछे कारकाध्यय लगते हैं ॥

कारकों को विभक्तियां भी कहते हैं । कर्ता को प्रथमा, कर्म को द्वितीया करण को तृतीया, सम्प्रदान को चतुर्थी, अपादान को पञ्चमी, सम्बन्ध को षष्ठी, अधिकरण को सप्तमी विभक्ति कहते हैं । कमी सम्बोधन को अष्टमी विभक्ति भी कह देते हैं ॥

३१ कारकों का ज्ञान अर्थमागधी व्याकरण समझने के लिये बड़ा उपयोगी है, इस लिये इसका एक और उदाहरण दिया जाता है :— इन्द्रचन्द्र ने रामस्वरूप के सन्दूक में से बच्चे के लिये टोपी निकाली ॥ इस वाक्य में निकाली क्रिया है । इस क्रिया का करने वाला इन्द्रचन्द्र है, इस लिये इन्द्रचन्द्र कर्ता है । 'निकाली' क्रिया का फल टोपी पर पड़ता है इस लिये 'टोपी' कर्म है । बच्चे के लिये यह क्रिया की गई इसलिये 'बच्चा' सम्प्रदान है । सन्दूक में से यह क्रिया प्रसरी इस लिये 'सन्दूक' अपादान है । रामस्वरूप का क्रिया के साथ कुछ सम्बन्ध नहीं किन्तु सन्दूक के साथ स्वामित्व सम्बन्ध है इस लिये रामस्वरूप सम्बन्धकारक में लिखा गया और सन्दूक उसका धन है ।

३२ बिना कारकाध्यय लगाए वाक्य का अर्थ निश्चित नहीं होता; जैसे मोहन सोहन किताब खरीदी । अब इस वाक्य का अर्थ भिन्न २ कारकाध्यय लगाने से भिन्न २ हो जावेगा; जैसे ॥

मोहन ने सोहन से किताब खरीदी

मोहन ने सोहन के लिये किताब खरीदी

मोहन से सोहन ने किताब खरीदी

मोहन के लिये सोहन ने किताब खरीदी

हे मोहन ! सोहन ने किताब खरीदी, इत्यादि इत्यादि ।

### अभ्यास

निम्न लिखित वाक्यों के शब्दों के कारक बतलाओ :—

रामचन्द्र<sup>१</sup> ने गायल<sup>२</sup> को मारा । आकाश<sup>३</sup> में तारे<sup>४</sup> चमकते

उत्तर १ कर्ता २ कर्म ३ अधिकरण ४ कर्ता ।



हैं । योधा५ तीरों६ से शूय्रों७ को मारते हैं । साधुओं८ को दान९ देने१० में पुण्य११ होता है । यह१२ मनुष्य१३ घोड़े१४ पर से गिर पड़ा । बालक१५ घोर१६ से डर गया । जयदेव१७ में धन-दत्त१८ की पुस्तक१९ बुरा ली । यह२० लाहीर२१ से आया है । मकड़ी२२ के जाले२३ में भिड़२४ फंस गई । दघात२५ में श्याही२६ डाल दो । ब्राह्मण२७ का अप्र२८ दां । भरने२९ में जल३० निकाल रहा है । शेर३१ के साथ मत खेल ।

## विशेषण ।

३३ संज्ञाओं की धायत तो केवल पूर्वोंक पाठ ही जानना काफी होगा ॥ अथ विशेषणों को लेते हैं । विशेषण तीन प्रकार के होते हैं—१ गुण वाची, २ संख्या वाची, ३ क्रमवाची ॥

गुण वाची जैसे—काला, नीला, तीक्ष्ण, खट्टा, मीठा, शीतल, गरम इत्यादि ।

संख्यावाची जैसे—चार, पांच, दस, बीस इत्यादि ।

क्रमवाची जैसे—पहिला, दूसरा तीसरी इत्यादि ।

३४ विशेषण प्रायः करके संज्ञाओं के साथ प्रयुक्त होते हैं और उस समय उनके पीछे कारकाव्यय नहीं जाँड़े जाते जैसे कि नीचे के उदाहरणों से प्रतीत होगा—यह इस छोटे नगर में रहता है । यह पांच आदमियों का घर है । पहिले साधु को दान देना चाहिए । यहां पर छोटा, पांच और पहिला

१ कर्ता २ कारण ३ कर्म ४ सम्प्रदान । ५ कर्म १० अयादान ११ कर्ता १२ कर्ता १३ कर्ता १४ पंचमी १५ प्रथमा १६ पंचमी १७ प्रथमा १८ षष्ठी १९ द्वितीया २० प्रथमा २१ पंचमी २२ षष्ठी २३ षष्ठी २४ प्रथमा २५ षष्ठी २६ द्वितीया २७ षष्ठी २८ द्वितीया २९ पंचमी ३० प्रथमा ३१ तृतीया ३

शब्द क्रम से अधिकरण, सम्बन्ध और सम्प्रदान कारक द्योतन करते हैं परन्तु अपनी अपनी संज्ञाओं के साथ प्रयुक्त होने से इन के पीछे कारकाव्यय नहीं लगे। किन्तु जब यह संज्ञाओं के बिना प्रयुक्त हों तब इन के पीछे भी कारकाव्यय लगते हैं जैसे छोटें में रहता है। पांचों का घर है। पाँहले को दान देना चाहिये ॥

## सर्वनाम

- ३५ सर्वनाम अर्थात् वह शब्द जो दूसरे शब्दों के बदले में बोले जाते हैं, तीन प्रकार के होते हैं।
- ३६ वह सर्वनाम जिन को बोलने वाला अपने लिये प्रयुक्त करता है उत्तम पुरुष के कहलाते हैं, जैसे— मैं, मुझको, मेरा इत्यादि ॥
- ३७ जिस के साथ बात कर रहे हों उसके लिये जो सर्वनाम आते हैं वह मध्यम पुरुष के कहलाते हैं; जैसे—तू, तुझे, तेरा इत्यादि ॥
- ३८ जो शब्द ऐसे मनुष्य या वस्तु के लिये आते जो बात करते समय वक्ता के सामने विद्यमान न हो या जिस से वक्ता सम्बन्धन करके बात न करे, प्रथम पुरुष के कहलाते हैं; जैसे—वह, उसे, उसका इत्यादि ॥
- ३९ उत्तम पुरुष के सर्वनाम की विभक्तियों वा कारकों के रूप—

एकवचन

बहुवचन

१ प्रथमा	मैं, मैंने	हम, हमने
२ द्वितीया	मुझे, मुझको	हमें, हमको
३ तृतीया	मुझसे, मेरे द्वारा	हमसे, हमारे द्वारा
४ चतुर्थी	मुझे, मुझको, मेरे लिये	हमें, हमको, हमारे लिये
५ पञ्चमी	मुझसे	हमसे

६ षष्ठी	मेरा, मेरे, मेरी	हमारा, हमारे, हमारी
७ सप्तमी	मुझपर,-में; मुझमें	हमपर,-में, हममें,-पर

इन की सम्बोधन विभक्ति नहीं बनती ॥

४० मध्यम पुरुष के सर्वनाम की विभक्तियां:—

	एकवचन	बहुवचन
१ प्रथमा	तू, तूने	तुम, तुमने
२ द्वितीया	तुझे, तुझको	तुम्हें, तुमको
३ तृतीया	तुझसे, तेरे द्वारा	तुमसे, तुम्हारे द्वारा
४ चतुर्थी	तुझे, तुझको, तेरे लिये	तुम्हें, तुमको, तुम्हारे लि
५ पञ्चमी	तुझसे	तुमसे
६ षष्ठी	तेरा, तेरे, तेरी	तुम्हारा, तुम्हारे, तुम्हारी
७ सप्तमी	तुझमें,-पर,-तेरे ऊपर	तुममें,-पर,-तुम्हारे ऊपर

४१ प्रथम पुरुष

	एकवचन	बहुवचन
१ प्रथमा	यह, इसने; वह, उसने	यह, इन्होंने; वह, उन्होंने
२ द्वितीया	यह, इसे, इसको, वह, उसे, उसको	यह, इन्हें, इन को; वह उन्हें, उनको
३ तृतीया	इससे, उससे,—के द्वारा	इनसे, उनसे,—के द्वारा
४ चतुर्थी	इसे, उसे,—को ...	इन्हें, उन्हें, इन उन-को
५ पञ्चमी	इससे, उससे	इनसे, उनसे
६ षष्ठी	इसका,-के,-की, उसका	इनका,-के,-की, उन--
७ सप्तमी	इस पर ...; उस पर...	इनपर ...; उनपर...

४२ इनके अतिरिक्त और भी सर्वनाम होते हैं, जैसे—कौन

जो, कोई

	एक व०	बहु व०
१ प्र०	कौन, किसने	कौन, किन्होंने
२ द्वि०	कौन, किसे, किस को	कौन, किन्हें, किन कं

३ प्र०	किस से, किस के द्वारा	किन से, किन के द्वारा
४ व०	किससे, किसको, किसकेलिये	किन्हें, किनको, किनकेलिये
५ व०	किससे	किनसे
६ प्र०	किसका, -के, -की	किनका, -के, -की
७ प्र०	किसपर, -में ...	किनपर, -में ...

एक व०

बहु व०

१ प्र०	जो, जिसने	जो, जिन्होंने
२ द्वि०	जो, जिसे, जिसको	जो, जिन्हें, जिनको

शेष "कौन" के रूपों की तरह ।

एक व०

बहु व०

१ प्र०	कोई, किसीने	कोई
२ द्वि०	कोई, किसीको	कोई
३ तृ०	किसीसे .	...
४ व०	किसीकेलिये .	...

इत्यादि

कोई शब्द प्रायः एकवचन में ही प्रयुक्त होता है ॥

## क्रिया ।

- ४३ जो शब्द किसी काम के करने या होने का बोध कराए उसे क्रिया कहते हैं; जैसे— वह जाता है, राम ने पानी पिया ।
- ४४ क्रियाएं धातुओं से बनती हैं । जाता है— जा धातु से बना, पिया—पी धातु से, इसी प्रकार खा, दे, ले, चल, फिर, पढ़ सब धातु हैं । अर्थ की अपेक्षा धातु दो प्रकार के होते हैं—अकर्मक और सकर्मक ।
- ४५ अकर्मक वह धातु है जिनकी क्रिया का फल कर्ता को छोड़

- कर अन्य शब्द में नहीं जाता, जैसे - राम सोता है, सीता दौड़ती है। यहां सोने और दौड़ने की क्रियाओं का फल उनके कर्ता 'राम' और 'सीता' को छोड़ अन्य कहीं नहीं जाता इस लिए सो और दौड़ धातु सकर्मक हैं।
- ४६ सकर्मक यह धातु हैं जिन की क्रिया का फल कर्ता को छोड़ अन्य वस्तु में चला जाये; जैसे - राम ने पानी पिया, सीता ने किताब पढ़ी। यहां पर पीने और पढ़ने की क्रियाओं के फल 'पानी' और 'किताब' में चले गए, इस लिए पी और पढ़ धातु सकर्मक हैं ॥
- ४७ काल तीन होते हैं—१ भूत (पीता हुआ), २ वर्तमान (पीतना हुआ), ३ भविष्यत् (आने वाला)।
- ४८ जिस क्रिया से किसी काम का भूत काल में होना सिद्ध हो उसे भूत काल की क्रिया कहते हैं; यथा—महावीर स्वामी ने भेषिक राजा को उपदेश दिया। राम ने रावण को जीता। मैं ने प्रन्ध पढ़ा।
- ४९ जिस क्रिया से किसी काम का वर्तमान काल में होना सिद्ध हो उसे वर्तमान की क्रिया कहते हैं; यथा—साधु नपस्या करता है। स्त्री भोजन बनाती है। लोग नगर की जाते हैं। युद्ध हो रहा है।
- ५० जिस क्रिया से किसी काम का भविष्यत् काल में होना सिद्ध हो उसे भविष्यत् काल की क्रिया कहते हैं; यथा—रावण तीर्थंकर होगा। वह नगर को जावेंगे। लड़ाई बन्द हो जावेगी।
- ५१ इन ही तीन कालों के और भेद होने से क्रियाओं के भी और भेद हो सके हैं, परन्तु उनके लिखने की कुछ आवश्यकता नहीं।

२ जो क्रिया किसी काम के करने की आशा को प्रकट करे उसे आज्ञाकारी क्रिया कहते हैं; यथा—हे राम ! तुम घर जाओ । अरे लक्ष्मण ! मेरी किताब लाओ । मैं रोटी खालूँ । वह यहाँ बैठे ।

३ क्रियाओं का प्रयोग दो प्रकार का होता है— १ कर्तृवाच्य और २ कर्मवाच्य ।

४ जब क्रिया का कर्ता प्रथमा विभक्ति में और कर्म द्वितीया विभक्ति में लिखा जाता है तो वह प्रयोग कर्तृ वाच्य कहलाता है; जैसे—साधु शास्त्र पढ़ता है । राम भोजन करता है । राजा ने पानी पिया । यहाँ पर साधु, राम, और राजा कर्ता हैं और प्रथमा विभक्ति में लिखे गये । शास्त्र, भोजन, पानी कर्म हैं और द्वितीया विभक्ति में लिखे गये ॥

५ जब क्रिया का कर्ता तृतीया विभक्ति में और कर्म प्रथमा विभक्ति में लिखा जावे तो वह प्रयोग कर्म वाच्य कहलाता है; जैसे—साधु के द्वारा शास्त्र पढ़ा जाता है । राम के द्वारा भोजन किया जाता है । राजा से पानी पिया गया । यहाँ पर साधु, राम, राजा क्रियाओं के करने वाले हैं परन्तु तृतीया विभक्ति में आए हैं । इसी तरह शास्त्र, भोजन, पानी कर्म हैं परन्तु प्रथमा विभक्ति में आए हैं ।

२. निम्नलिखित क्रियायें किस प्रकार की हैं ?

१ वायु चलती है । २ आग जलती है । ३ उसका घर जल गया । ४ मैं घरसेगा । ५ यद्ये का मत जगाओ । ६ राम अपनी किताब पढ़ता है ।

२ उत्तर ॥ अक० = अकर्मक, सक० = सकर्मक, वर्त० = वर्तमान, भू० = भूत, भवि० = भविष्यत्, आ = आद्याकारी ॥ १ अक० वर्त० २ सक० वर्त० ३ सक० भू० ४ सक० भवि० ५ सक० आ० ६ सक० वर्त०

७ नू रोटी कय खाएगा ? ८ रेलगाड़ी बहुत तेज़ दौड़ती है । ९ उसने खीर खाई । १० वह कपड़ा लें जावे । ११ रायण तांधंडूर बनेगा । १२ रामचन्द्र ने चिट्ठी लिखी । १३ साधू अपने पास धन न रखवें । १४ वह बालक रोता है । १५ नयकार मन्त्र का जाप करो ।

## अर्धक्रिया

- ५६ जिन क्रियाओं का वर्णन ऊपर हुआ है उन्हें पूर्ण क्रिया कहते हैं क्योंकि उनसे वाक्यार्थ का पूरा बोध हो जाता है, जैसे राम जाता है या जाता है राम कहने से । लेकिन वह क्रियाएँ जिनसे वाक्य अधूरा ही रहता है अर्धक्रियाएँ कहलाती हैं जैसे जाता हुआ राम, या राम जाता हुआ । यह वाक्य पूरा नहीं है इसके सुनने से सुनने वाले की आकांक्षा बनी रहती है ।
- ५७ अर्धक्रियाएँ भी कई प्रकार की हैं ।

(क) वर्तमान अर्धक्रिया—इसके भी दो भेद हैं, यथा—

कर्तृवाच्य वर्तमान अर्धक्रिया, जैसे—जाता हुआ, करता हुआ, खाता हुआ, पढ़ता हुआ, इत्यादि ।

कर्मवाच्य वर्तमान अर्धक्रिया जैसे—पढ़ा जाता हुआ, किया जाता हुआ, खाया जाता हुआ, इत्यादि ।

(ख) भूत अर्धक्रिया हिन्दी में केवल कर्मवाच्य में ही प्रयुक्त होती है, जैसे—किया गया, किया हुआ, मारा हुआ, मारा गया, दिया हुआ, दिया गया, इत्यादि ।

(ग) भविष्यत् अर्धक्रिया का प्रयोग हिन्दी में नहीं होता—

(घ) योजक अर्धक्रिया—धातु के साथ कर, के, या करके

७ सक० भवि० ८ अक० वर्त० ९ सक० भू० १० सक० भा० ११ अक०  
भवि० १२ अक० भू० १३ अक० भा० १४ अक० वर्त० १५ सक० भा० ।

लगाने से बनती है; जैसे—वह रोटी खाकर गया ( उसने रोटी खाई और फिर वह चला गया ), राम ने रुपया देकर किताय ली ( राम ने रुपया दिया और किताय ली )।

(३) मूर्त अर्थ क्रिया वह है जिससे धातु का भाव प्रकट हो और जो स्वयं किसी दूसरी क्रिया का कर्ता या कर्म बन सके; जैसे—वह लिखना नहीं जानता, दान देना बहुत अच्छा है।

मूर्त अर्थ क्रिया प्रयोजन के अर्थ में भी प्रयुक्त होती है; यथा—वह रोटी खाने आया। मैं महाराज के दर्शन करने जाता हूँ।

## अव्यय

५८ अव्यय वह शब्द हैं जिनमें विभक्ति, लिङ्ग ध्वन आदि के कारण कोई परिवर्तन नहीं होता; यथा—आज, कल, यहाँ, कहाँ, लेकिन, इत्यादि।

५९ अव्यय तीन प्रकार के होते हैं: यथा-विशेषण, योजक और भावसूचक।

६० विशेषण अव्यय भी तीन प्रकार के होते हैं; यथा—

६१ गुणवाची जैसे—वह तेज़ दौड़ता है, तू शीघ्र चला जा, वह मीठा बोलता है, धीरे धीरे पढ़।

६२ कालवाची जैसे—तू कब जाएगा, कल खूब मँह बरसा।

६३ स्थानवाची जैसे—जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है, मैं कहाँ जाऊँ ?

६४ योजक अव्यय शब्दों या वाक्यों के जोड़ने में काम आते



हैं; यथा—राम और कृष्ण चले गये । राजा हो या रंक, मौत सब के सिर पर बोलती है, बालक आया परन्तु बिना भोजन किये ही चला गया ।

६५ भावसूचक अव्यय वह हैं जो वक्ता के किसी भाव (क्रोध, हर्ष, शोक आदि) को प्रगट करें; जैसे —ओहो ! यह क्या हुआ, आहा ! रेल आगई. हैं ! तू स्कूल से भाग आया ।

## वाक्य प्रकरण

६६ वाक्य प्रकरण से वाक्य बनाने का बोध होता है। शब्दों का ऐसा समूह, जिस से कि अर्थ का पूर्ण बोध हो जाय और सुनने वाले को कुछ आकांक्षा न रहे, वाक्य कहलाता है। वाक्य के मुख्य दो अङ्ग हैं कर्ता और क्रिया । जब क्रिया सकर्मक हो तो उस के साथ कर्म भी जुड़कर आता है ।

६७ वाक्य रचना में वाक्य के अङ्ग इस क्रम से रखे जाते हैं :—  
जब क्रिया अकर्मक हो तो पहिले कर्ता फिर क्रिया जैसे—राम सोता है, देवी आई, पानी बरसा । जब क्रिया सकर्मक हो तो पहिले कर्ता, फिर कर्म और सब से पीछे क्रिया रखी जाती है यथा—राम पानी पीता है, सीता ने चिट्ठी लिखी ।

वाक्य में अन्य कारकों का स्थान

६८ जब क्रिया अकर्मक हो तो अन्य कारक प्रायः कर्ता और क्रिया के बीच रखे जाते हैं; जैसे राम देहली से आया है, शरीर सरदी से कांपता है, पत्नी वृत्तों पर सोते हैं ।

६९ जब क्रिया सकर्मक हो तो अन्य कारक प्रायः कर्ता और कर्म के दरमियान रखे जाते हैं जैसे—वह कृष्ण से पानी भरता है, तू दाल के साथ रोटी खा ले । मैं ने चाकू से कलम बनाई ।

# अर्धमागधी व्याकरण ।



## अर्धमागधी

७० अर्धमागधी उस भाषा का नाम है जिस में श्वेताम्बर सम्प्रदाय के आगम ग्रन्थ अर्थात् अङ्ग, उपाङ्ग आदि सूत्र लिखे हुए हैं । साधारण जन इसको प्राकृत या मागधी भी कहते हैं । किन्तु इन में प्राकृत तो जाति वाचक शब्द है और मागधी व्यक्ति वाचक । प्राकृत कहने से सघ प्रकार की भाषाएँ जो नाटक तथा अन्य ग्रन्थ सत्तसई, गडड़वहो, सेतुवन्ध आदि में प्रयुक्त हुई हैं वह भी आ जाती हैं । कभी कभी प्राकृत कहने से महाराष्ट्री नाम एक प्राकृत भाषा का बोध होता है । मागधी कहने से मगध देश की प्राकृत भाषा का बोध होता है जो अर्धमागधी से कुछ कुछ मिलती है ।

७१ औपपातिक ( ओषवाइय ) सूत्र में लिखा है कि भगवान् महावीर अर्धमागधी भाषा में बोलते थे । उसी भाषा में धर्मोपदेश देते थे । वह अर्धमागधी सब आर्य और अनार्य पुरुषों की अपनी अपनी भाषा के रूप में बदल जाती थी । तथा आचार्य हेमचन्द्र अपने व्याकरण की टीका में लिखते हैं कि पुराने सूत्र ( अर्थात् अङ्ग, उपाङ्ग आदि ) अर्धमागधी भाषा में रचे हुए हैं । इससे सिद्ध हुआ कि सूत्रों की भाषा का असली नाम अर्धमागधी ही है ॥

## शब्द प्रकरण

- ७२ हिन्दी की तरह अर्धमागधी के शब्द भी पांच हिस्सों में विभक्त हैं—
- १ संज्ञा जैसे—पामणाह पार्श्वनाथ, साधग धावरु, मिय मृग, गिह घर, इत्यादि ।
  - २ विशेषण जैसे—किरह कृष्ण, काला, सेय श्वेत, तिव्य तीव्र, तेज़, इत्यादि ।
  - ३ सर्वनाम जैसे—तुम व. मम मेरा, तस्स उराका, तुवमे तुम, आप, इत्यादि ।
  - ४ क्रिया जैसे—गच्छइ यह जाता है, करेइ यह करता है, बयासी यह घोला, इत्यादि ।
  - ५ अव्यय जैसे—सिग्धं शोध, अज्ज आज, जइ यदि, इत्यादि ।
- ७३ अर्धमागधी में वचन दो होते हैं—१ एकवचन, २ बहुवचन; लिङ्ग तीन होते हैं—१ पुलिङ्ग, २ नपुंसक लिङ्ग, ३ स्त्रीलिङ्ग । शब्दों का लिङ्ग नियत होता ॥
- ७४ हिन्दी की भांति यहां भी आठ कारक होते हैं ।
- ७५ कारकों का बोध कराने के लिये हिन्दी में तो शब्द के पीछे ने, से, को, आदि कारकाव्यय लगाए जाते हैं जो शब्द से भिन्न ही रहते हैं परन्तु अर्धमागधी में कारकों का बोध शब्द के पीछे प्रत्यय जोड़ने से होता है जो शब्द के साथ सर्वथा मिल जाते हैं ॥
- ७६ प्रत्यय—शब्द के अर्थ में परिवर्तन करने के लिये जो एक दो अक्षर शब्द के साथ जोड़े जाते हैं उन्हें प्रत्यय कहते हैं; जैसे

पुरिस शब्द का अर्थ है आदमी; इसके साथ इ जोड़ने से पुरिसे एक आदमी ने, आ जोड़ने से पुरिसा बहुत आदमियों ने, अनुस्वार जोड़ने से पुरिसं एक आदमी को, स्स जोड़ने से पुरिसस्स एक आदमी का इत्यादि अर्थ हो जाते हैं। इसी प्रकार गच्छ का अर्थ है जाना; इसके साथ इ जोड़ने से गच्छइ वह जाता है, आमि जोड़ने से गच्छामि मैं जाता हूँ, इत्यादि अर्थ हो जाते हैं। यहां पर ए, आ, अनुस्वार, स्स, इ, आमि प्रत्यय कहलाते हैं ॥

७७ कारक या विभक्ति बनाने के लिये अर्धमागधी में शब्दों के लिङ्ग तथा अन्तिम वर्ण के अनुसार भिन्न २ प्रत्यय जोड़े जाते हैं। और सब शब्दों के अन्तिम वर्ण स्वर ही होते हैं। सुभीते के लिये कारक बनाने में शब्दों के यह विभाग हैं—

पुलिङ्ग शब्द जिनका अन्तिम वर्ण अ है

नपुंसक           "           "           "  
पुलिङ्ग           "           "           इ या उ है

नपुंसक           "           "           "  
स्त्रीलिङ्ग       "           "           आ, इ, ई, उ, ऊ है

इतर शब्द जो उपर्युक्त नियमों से बाहिर हैं ॥

७८ अकारान्त पुलिङ्ग देव शब्द के रूप

एकवचन

बहुवचन

प्रथमा देवे, देवो १

देवा

(एक) देव ने

(बहुत) देवों ने

द्वितीया देवं

देवे

(एक) देव को

(बहुत) देवों को

१ गद्य में प्रायः देवे, पद्य में बहुत बार देवो भी प्रयुक्त होता है ॥

दूतोण देवेण	देवेदि
(एक) देव के द्वारा	(बहुत) देवों के द्वारा
बहुमी देवाए, देवरस	देवाए
एक देव के लिये	(बहुत) देवों के लिये
बहुमी देवाओ, देवा	देवेहिता
(एक) देव से	(बहुत) देवों से
बहुी देवरस	देवाए
एक देव का	(बहुत) देवों का
बहुमी देवसि, देवे	देवेसु
एक देव में	(बहुत) देवों में
बहुओपन देवा ! देवो !	देवा !
३ देव !	दे देवो !

७६ इसी प्रकार अन्य पुंलिङ्ग शब्दों के जिन का पिछला अक्षर अ रूप बनाए जाते हैं ।

अभ्यास के लिये कुछ शब्द :—

अह्यार	इंगाल
अतिवार	अद्वारा कोला
अलुगार	ईसर
अनगार, मापु	इंखर, मानिक, सरदार
असुर	उज्जाण
असुर, देवता विशेष	उद्यान, बाग
आचण	परक्रम
आपण, दुकान	पराक्रम, शक्ति
आस	रुप
पाड़ा	रूप, शकल

७७ अकारान्त नपुंसक लिङ्ग वण = वन शब्दके रूप

एकवचन	बहुवचन
१ प्र० वण	वणार्ह
एक वन ने	बहुत वनों ने

२ द्वि० वण

एक वन को

वणार्ह

बहुत वनों को

वाकी के रूप अकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दों की मांति होते हैं ।

८२ इसी प्रकार कज्ज "कार्य" फल "फल" मुह "मुख" आदि के रूप जान लेना ॥

८३ इकारान्त पुल्लिङ्ग मुणि=मुनि शब्द के रूप

एकवचन

१ प्र० मुणी

एक मुनि ने

२ द्वि० मुणि

एक मुनि को

३ तृ० मुणिणा

एक मुनि द्वारा

४ ज० मुणियो, मुणिस्स

एक मुनि के लिये

५ सं० मुणोओ, मुणियो

एक मुनि से

६ ष० मुणियो, मुणिस्स

एक मुनिका

७ ष० मुणिसि

एक मुनि में

नं० मुणी !

हे मुनि !

बहुवचन

मुणीओ, मुणी

बहुत मुनियों ने

मुणीओ, मुणी

बहुत मुनियों को

मुणीहि

बहुत मुनियों द्वारा

मुणीण

बहुत मुनियों के लिये

मुणीहितो

बहुत मुनियों से

मुणीण

बहुत मुनियों का

मुणीसु

बहुत मुनियों में

मुणियो !

हे मुनियो !

८४ उकारान्त पुल्लिङ्ग साहु=साधु के रूप

एकवचन

१ प्र० साहु

एक साधु ने

२ द्वि० साहु

एक साधु को

बहुवचन

साहुओ, साहु, साहुओ

बहुत साधुओं ने

साहुओ, साहु, साहुओ

बहुत साधुओं को

१ न० सादृणा	एक माधु के द्वारा	सादृदि	बहुत माधुओं के द्वारा
४ व० सादृणो, सादृणम्	एक माधु के लिये	सादृणं	बहुत माधुओं के लिये
५ व० सादृणो	एक माधु में	सादृणितो	बहुत माधुओं में
६ व० सादृणो, सादृणस	एक माधु का	सादृणं	बहुत माधुओं का
७ व० सादृणि	एक माधु में	सादृणु	बहुत माधुओं में
८ व० सादृ !	दे माधु !	सादृणो !	दे माधुओं !
	दे माधु :		

२५ इकारान्त नपुंसक दहि = दधि के रूप

एकवचन	बहुवचन
१ व० दहि	दहीदं, दहीणि
दही	दही
२ व० दहि	दहीदं, दहीणि
दही को	दहियों को

शेष पुलिङ्ग वत्

२६ उकारान्त नपुंसक महु = मधु के रूप

एकवचन	बहुवचन
१ व० महु	महदं, महणि
महद	महद
२ व० महुं	महदं, महणि
महद को	महदों को

शेष पुलिङ्ग वत्

२७ आकारान्त स्त्रीलिङ्ग माळा = माला

एकवचन	बहुवचन
१ व० माळा	मालाद्यो, माला
माला	मालाए

अर्धमागधी व्याकरण ।

२ द्वि०	मालं माला के	मालाश्रो, माला मालाश्रो के
३ तृ०	मालाप माला के द्वारा	मालाहिं मालाश्रो के द्वारा
४ च०	मालाप माला के लिये	मालाणं मालाश्रो के लिये
५ पं०	मालाश्रो माला से	मालाहितो मालाश्रो से
६ ष०	मालाप माला का	मालाणं मालाश्रो का
७ म०	मालाप माला में	मालासु मालाश्रो में
सं०	माले ! हे माला !	मालाश्रो ! हे मालाश्रो

८८ इकारान्त स्त्रीलिङ्ग कुच्छि = कुच्छि

	एक वचन	बहुवचन
१ प्र०	कुच्छी कुच्छि	कुच्छीश्रो, कुच्छी कुच्छियां
२ द्वि०	कुच्छिं कुच्छि को	कुच्छीश्रो, कुच्छी कुच्छियों को
३ तृ०	कुच्छीप कुच्छि के द्वारा	कुच्छीहिं कुच्छियों के द्वारा
४ च०	कुच्छीप कुच्छि के लिये	कुच्छीणं कुच्छियों के लिये
५ पं०	कुच्छीश्रो कुच्छि से	कुच्छीहितो कुच्छियों से
६ ष०	कुच्छीप कुच्छि का	कुच्छीणं कुच्छियों का
७ म०	कुच्छिसि कुच्छि में	कुच्छीसु कुच्छियों में
सं०	कुच्छी ! हे कुच्छि !	कुच्छीश्रो ! हे कुच्छियो !



८६ उकारान्त स्त्रीलिङ्ग धेगु = धेनु, गाय

एक व०	बहु व०
१ प्र० धेगु गाय	धेगुओ, धेगु गाय
२ द्वि० धेगुं गाय को	धेगुओ, धेगु गायों को
३ तृ० धेगुए गाय के द्वारा	धेगुहि गायों के द्वारा
४ च० धेगुए गाय के लिये	धेगुएणं गायों के लिये
५ सं० धेगुओ गाय से	धेगुहितो गायों से
६ ष० धेगुए गाय का	धेगुएणं गायों का
७ म० धेगुंनि गाय में	धेगुसु गायों में
८० धेगु ! हे गाय!	धेगुओ हे गायों!

८७ ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग नई = नदी

एक व०	बहु व०
१ प्र० नई नदी	नईओ, नई नदियां
२ द्वि० नईं नदी को	नईओ, नईं नदियों को
३ तृ० नईए नदी के द्वारा	नईहि नदियों के द्वारा
४ च० नईए नदी के लिये	नईएणं नदियों के लिये
५ ष० नईओ नदी से	नईहितो नदियों से

इ य० नदीए	नदीए
नदी का	नदियों का
उ म० नदीए	नदीसु
नदी में	नदियों में
उ म० नदी !	नदीओं !
हे नदी !	हे नदियों !

६१ ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग बहु = बहु, बहू

एक व०	बहु व०
१ म० बहु	बहुओं, बहु
बहु	बहुएं
२ द्वि० बहुं	बहुओं, बहु
बहु को	बहुओं को
३ तृ० बहुए	बहुहिं
बहु के द्वारा	बहुओं के द्वारा
४ न० बहुए	बहुएं
बहु के लिये	बहुओं के लिये
५ प० बहुओं	बहुहितो
बहु से	बहुओं से
६ ष० बहुए	बहुएं
बहु का	बहुओं का
७ स० बहुए	बहुसु
बहु में	बहुओं में
स० बहु !	बहुओं !
हे बहु !	हे बहुओं !

६२ बहुत से शब्द ऐसे हैं कि जिन के कुछ रूप उपर्युक्त नियमों से नहीं बनते। यह रूप प्रायः संस्कृत के ही विकृत रूप हैं। ऐसे रूपों को हम यहां निपात-सिद्ध<sup>१</sup> कह सकते हैं। जिन निपात-सिद्ध रूपों का प्रयोग अधिक होता है उन को नीचे के कोष्ठक में लिखते हैं।

१ निपातसिद्ध उन शब्दों को कहते हैं जिन के बनाने के कोई साधारण नियम नहीं है।

निपातसिद्ध रूप	विभक्ति	शब्द	अर्थ	संस्कृतरूप
अप्यणा	३, एक०	आय, अप्य	आत्मा	आत्मना
अप्पा	१, एक०	आय, अप्य	आत्मा	आत्मा
अप्याणा	१, बहु	आय, अप्य	आत्मा	आत्मानः
अरहं	१,२ एक	अरहंत	अरहंत	अहं, अहंतम्
आया	१, एक	आय	आत्मा	आत्मा
आयआं	५, एक	आय	आत्मा	आत्मनः
कायसा	३, एक	काय	काय, देह	कायेन
जाधा	३, एक	जाइ	जाति	जात्या
तवसा	३, एक	तव	तप. तपस्या	तपसा
तेयसा	३, एक	तेय	तेज, प्रताप	तेजसा
पियरं	२, एक०	पिउ, पिइ	पिता	पितरम्
पिया	१, एक	पिउ, पिइ	पिता	पिता
पियरो	१,२ बहु	पिउ, पिइ	पिता	पितरः
भगवं	१,२, एक	भगवंत	भगवान्	भगवान्, भगवन्तम्
भगवओ	६, एक	भगवंत	भगवान्	भगवतः
भगवया	३, एक	भगवंत	भगवान्	भगवता
भायरं	२, एक	भाउ, भाइ	भाई	भ्रातरम्
भाया	१, एक	भाउ, भाइ	भाई	भ्राता
माया	१, एक	माउ, माइ	माता	माता
मइमं	१,२ एक	मइमंत	मतिमान	मतिमान् मतिमन्तम्
मइमओ	६, एक	मइमंत	मतिमान	मतिमतः
मइमया	३, एक	मइमंत	मतिमान	मतिमता
मायरं	२, एक	माउ, माइ	माता	मातरम्
मणसा	३, एक	मण	मन	मनसा
रणसा	३, एक	राइ	राजा	राज्ञ
रणो	६, एक	राइ	राजा	राजः
राया	१, एक	राइ	राजा	राजा
रायाणं	२, एक	राइ	राजा	राजानम्
रायाणां	१,२ एक	राइ	राजा	राजानः, राजः
वयसा	३, एक	वय	वचन	वचसा

अभ्यास—नीचे के वाक्यों को ध्यान से पढ़ो ।

१. साहू भ्रातृं करोइ २. नरा नयरं गच्छन्ति  
साधु ध्यान करता है सादमी नगर को भाते हैं
३. पांय दुक्खस्स कारणं अत्थि ४. रक्खेहिंतो फलाइं पडंति  
पाप दुःख का कारण है वृष्टों पर से फल गिरते हैं
५. देवाणुप्पिया ! अहं तुम्हे सिक्खभिक्षुं दत्तयामि  
हे देवताओं के प्यारे ! मैं चाप को शिष्य रूप भिक्षा देता हूँ
६. अग्गी तणाइं डहइ ७. मुण्णिणो गिरिं दुरुहंति  
अग्नि तिनकों को जलातो है मुनि लोग पहाड़ पर चढ़ते हैं
८. मणुसाणं ओसदेहिं याहीओ नस्संति  
मनुष्यों की शीपधियों द्वारा व्याधियां नाश होती हैं
९. आयरिया सोसाणं धम्मं आइक्खंति  
साचार्य शिष्यों को धर्म (का उपदेश) कहते हैं
१०. इसीणं वयणं पमाणं भवइ  
श्रुतियों का वचन प्रमाण होता है
११. पुत्तरस लाभेणं जणा तुट्ठा भवति  
पुत्र के लाभ से लोग सुख होते हैं
१२. गिम्हाकाले नईणं जलाणि आयवेणं नस्संति  
गर्मी के काल में नदियों के जल धूप से नष्ट हो जाते हैं (सूख जाते हैं)
१३. जिणेणं दुविहे धम्मे पणत्ते, साहु धम्मे सावगधम्मे य ॥  
जिन भगवान् ने दो प्रकार का धर्म कहा है, साधु धर्म और सावक धर्म ॥

## विशेषण

६३. हिन्दी की भांति अर्धमागधी में भी विशेषण, विशेष्य ( अर्थात् संज्ञा ) के पहिले रखे जाते हैं परन्तु विशेषण के साथ भी विभक्ति के वही प्रत्यय लगते हैं जो उसके विशेष्य के साथ लगे हों जैसा कि नीचे के उदाहरणों से स्पष्ट होगा ।

सुभस्स कम्मस्स फलं सुहं भवइ । सुभाए कम्म पयडीए ।

शुभ (का) कर्म का फल सुख होता है । शुभ (से) कर्म प्रकृति से ।

सुभाणं कम्माणं फलं सुहं भवइ । असुभाए कम्म पयडीए ।

शुभ (का) कर्मों का फल सुख होता है । अशुभ (से) कर्म प्रकृति से ।

सुमाहं कम्माहं कटेमाणे नरे समं गच्छद्

शुभ (को) कामों को करता हुआ मनुष्य स्वर्ग को जाता है

असुभेहि कम्मेहि जीवा नरये पदंति

अशुभ (में) कामों में जीव नरक में पड़ते हैं

नवएहं मासाणं । पंचसु ठाणेसु; इत्यादि

नी (का) महानों का पांच (में) स्थानों में

६४. लेकिन जब विशेषण के साथ विभक्ति के प्रत्यय न लगाने हों तो उसे विशेष्य के साथ मिला देने हैं जैसे:—

सुभकामस्स । सुभकामाणं । सुभकम्माहं । असुभकम्मेहि ।

शुभ कर्म का शुभ कर्मों का शुभ कर्मों को अशुभ कर्मों में

नवमासाणं । पंचठाणेसु ।

नी महानों का पांच स्थानों में

### संख्या प्रत्यय

६५. १ = एग केवल एकवचन में प्रयुक्त होता है ।

१ प्र० २ द्वि० ३ तृ० ४ च० ५ प० ६ ष० ७ स०  
 पु० एगे एगं एगेणं एगरस एगाओ एगस्स एगंसि

नपु० एगं " " " " " "

स्त्री० एगा एगं एगाए एगाए एगाओ एगाए एगाए

जब एग शब्द सर्वनाम हो और उसका अर्थ "कोई" हो तब

यह बहुवचन में भी प्रयुक्त होता जैसे

१ प्र० २ द्वि० ३ तृ० ४ च० ५ प० ६ ष० ७ स०

एगे एगे एगेहि एगेसि एगेहितो एगेसि एगेसु

६६. \* २ = दो से अट्ठारह शब्द पर्यन्त बहुवचन में प्रयुक्त होते हैं

१ प्र० २ द्वि० ३ तृ० ४ च० ५ प० ६ ष० ७ स०

पु० दो दो दोहि दोगहं दोहितो दोगह दोसु

नपु० दं दिण दोगिण " " " " "

स्त्री० दुवे दुवे " " " " "

\*दो.ति, चउ शब्दों के प्रयोग में लिङ्ग का कुछ ख्याल नहीं रक्खा जात  
 तिणिण जणा, तओ वणाहं भी देखने में आते हैं ॥

जब "दो" शब्द किसी समास के आदि में हो तो उसका दु या वे भी हो जाता है जैसे—दुगुण दुगना दुपय दो पैर वाला, वेइ-दिय दो इन्द्रियों वाला ।

६७ \* ३ = ति उ० तथो तथो तिहिं तिहं तिहितो तिहं तीसु

नपु० तिणिण तिणिण ,, ,, ,, ,, ,,  
समास के आदि में ति को ते भी हो जाता है—

तिविह = तीन प्रकार का तेइदिय = तीन इन्द्रियों वाला

६८ \* ४ = चउ चत्तारो चत्तारो चउहिं चउहं चउहितो चउहं चउसु

चत्तारि चत्तारि ,, ,, ,, ,, ,,

चउरो चउरो ,, ,, ,, ,, ,,

समास के आदि में स्वर से पहिले चउ का चउर् हो जाता है जैसे—चउरिदिय = चार इन्द्रियों वाला चउपय = चार पैरों वाला ।

६९ ५ = पंच पंच पंच पंचहिं पंचहं पंचहितो पंचहं पंचसु

१०० ६ = छ । ७ = सत्त । ८ = अट्ट । ९ = नव । १० = टस ।

११ = एकवारस । १२ = दुवालस, वारस । १३ = तेरस ।

१४ = चोहस, चउहस । १५ = पण्णरम । १६ = सो-

लस । १७ = सत्तरस । १८ = अट्टारस । १९ = सगुण-

वीसं, सगुणवीसा, अठणवीसइ । २० = वीसं, वीसा,

वीसइ । २१ = एकवीसं, सगवीसं । २२ = बावीसं ।

२३ = तेवीसं । २४ = चउवीसं । २५ = पणवीसं ।

२६ = छटवीसं । २७ = सत्तवीसं । २८ = अट्टा-

वीसं । २९ = अठणत्तीसं । ३० = तीसं । ३१ =

एकतीसं । ३२ = बत्तीसं । ३३ = तेत्तीसं । ४० =

चत्तालीसं । ४२ = बायालीसं । ४४ = चउयालीसं,

•धेति, चउ शब्दों के प्रयोग में निङ्ग का कुछ ध्यान नहीं रक्खा जाता तिणिण जणा, तथो घणाइं भी देखने में आते हैं ॥

चोयालीसं । ४७ = मोयालीसं । ४८ = अट्टघरा-  
 लीसं, अट्टयालीसं । ४९ = अठगापरं । ५० =  
 पाण्णामं । ५१ = अट्टावणं । ५२ = अट्टपणं । ५३ =  
 अठणट्टिं । ६० = सट्टिं । ७० = सत्तरि । ८० = अ-  
 सोइ । ९० = नठइ । १०० = मय । १०१ = एणमय ।  
 १००० = मयस्स । १००,००० = सयसुहस्स ।  
 १०,०००,००० = क्रीडि ।

१०१ १६ से २६ तक शब्दों का प्रयोग ख्रीलिङ्ग एक घचन में होता  
 है परन्तु प्रथमा और द्वितीया विभक्ति में नपुंसक एक घचन  
 में भी हो जाता है ॥

### क्रमवाची शब्द

१०२ १ पढम, पढमिल्ल । २ विइय, वीय, वुअ, वीअ ।  
 ३ तइय, तअ । ४ अउत्थ, ५ मंघम, ६ अट्ट ।  
 ७ सत्ताम । १६ अगुणवीसइम, अगुणवीसम । २०  
 वीसइम, वीस । ३० तीसइम, तीसं । ४६ अठगा-  
 पण । ७२ वावत्तर । ८७ सत्ताणवय ।

१०३ संख्या के पीछे प्रायः "म" जोड़ने से क्रमवाची शब्द बन  
 जाते हैं ।

१०४ ख्रीलिङ्ग में उनके पीछे—'ई' या 'आ' जोड़े जाते हैं । पढम  
 का ख्रीलिङ्ग पढमा ही होता है ॥

### अर्ध संयुक्त संख्याएँ

१०५ १ = अट्ट, अट्ट । ११ = दिवट्ट । २ = अट्टाइज्ज ।  
 ३ = अट्टधुट्ट । ४ = अट्टपंचम । ५ = अट्टअट्ट । ६ =  
 = अट्टमत्तम । ७ = अट्टट्टम । ८ = अट्टनवम ।

वार-अर्थ द्योतक शब्द

१०६ १ सहं = एक वार । २ दुक्खुत्तो, दोखुत्तो, दोच्चं = दोवार । ३ तिक्खुत्तो, तच्चं = तीन वार । ७ सत्तखुत्तो = सात वार = १ तिसत्तखुत्तो = २१ वार ०० अणंत-खुत्तो = अनन्त वार ।

सर्वनाम

१०७ उत्तम पुरुष

एकवचन  
१ प्र० अहं, हं  
मै, मैं ने  
२ द्वि० ममं, मं  
मुझे  
३ तृ० मय  
मुझसे  
४ च० मम, ममं  
मुझे  
५ षं० ममाहितां  
मुझसे  
६ ष० मम, ममं  
मेरा  
७ ष० ममसि  
मुझमें

बहुवचन  
अम्हे, धयं  
हम, हमने  
अम्हे, एो  
हमे  
अम्हेहिं  
हमसे  
अम्हं, मो  
हमें  
अम्हेहितो  
हमसे  
अम्हं, मो  
हमारा  
अम्हेसु  
हममें

१०८ मध्यम पुरुष

एकवचन  
१ प्र० तुमं, तं  
तु, तुने

बहुवचन  
तुम्हें, तुम्हें  
तुम, तुमने



२ द्वि० तुमं	तुभ्मे, घो
तुभ्के	तुभ्हे
३ तृ० तुमं	तुभ्मेहि, तुभ्हेहि
तुभ्कडे	तुभ्मे
४ च० तय, ते. तुमं	तुभ्मं, तुभ्मं
तुभ्के	तुभ्हे
५ प० तुमाहितो	तुभ्मेहितो
तुभ्कडे	तुभ्मे
६ ष० तय, ते, तुमं	तुभ्मं, तुभ्मं
तेरा	तुभ्कारा
७ स० तुमंसि	तुभ्मेसु, तुभ्हेसु
तुभ्कडे	तुभ्मे

उत्तम और मध्यम पुरुष के सर्वनामों के रूप तीनों लिङ्गों में ऐसे ही रहते हैं ।

१०६ प्रथम पुरुष "त" शब्द = वह

	एकवचन	
पु०	नपु०	स्त्री०
१ प्र० से	नं	सा
२ द्वि० तं	तं	तं
३ तृ० तेषं	तेषं	ताए
४ च० तस्स	तस्स	तीसे
५ प० ताओ, तम्हा	ताओ, तम्हा	ताओ
६ ष० तस्स	तस्स	तीसे, ताए
७ स० तंसि, तंमि	तंसि, तंमि	तीसे, ताए
	बहुवचन	
पु०	नपु०	स्त्री०
१ प्र० ते	ताई, ताणि	ताओ
२ द्वि० ते	ताई, ताणि	ताओ
३ तृ० तेहिं	तेहिं	ताहिं
४ च० तेसि	तेसि	तासि
५ प० तेहितो	तेहितो	ताहितो
६ ष० तेसि	तेसि	तासि
७ स० तेसु	तेसु	तासु

११० प्रथमपुरुष "एय" शब्द = यह

		एक वचन	
	पु०	नपुं०	स्त्री०
१ प्र०	एसे	एयं	एसा
२ द्वि०	एयं	एयं	एयं
३ तृ०	एएणं	एएणं	एयाए
४ च०	एयस्स	एयस्स	एयाए
५ पं०	एयाओ	एयाओ	एयाओ
६ ष०	एयस्स	एयस्स	एयाए
७ स०	एयंसि, एयमि	एयसि, एयमि	एयाए
		बहुवचन	
	पु०	नपुं०	स्त्री०
१ प्र०	एए	एयाई	एयाओ
२ द्वि०	एए	एयाई	एयाओ
३ तृ०	एएहि	एएहि	एयाहि
४ च०	एएसि	एएसि	एयासि
५ पं०	एएहितो	एएहितो	एयाहितो
६ ष०	एएसि	एएसि	एयासि
७ स०	एएसु	एएसु	एयासु

१११ प्रथम पुरुष "अमु" शब्द = वह

इस के रूप पुस्त्रिङ्, स्त्रीलिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग में क्रमशः गुरु, धेणु और महु शब्द की तरह होते हैं ॥

११२ प्रथमपुरुष "इम" शब्द = यह

इस के रूप "त" शब्द के रूपों की तरह होते हैं केवल प्रथमा विभक्ति के रूपों में भेद है ॥

		प्रथमा विभक्ति के रूप	
	पु०	नपुं०	स्त्री०
एक व०	इमे, अयं	इमं, इदं	इमा, इयं
बहु व०	इमे	इमाहं	इमाओ

२ द्वि० तुमं	तुम्हो, यों
गुंके	गुम्हें
३ प्र० तुमं	तुम्होहि, तुम्हेंहि
गुंके	तुम्हो
४ च० तय, ते तुमं	तुम्हं, तुम्हं
गुंके	गुम्हें
५ प० तुमाहिंता	गुम्होहितो
गुंके	गुम्हो
६ प्र० तय, ते, तुमं	तुम्हं, तुम्हं
तेरा	गुम्हाता
७ म० तुमांसि	तुम्होसु, तुम्हेंसु
गुंके	गुम्हें

उत्तम श्रौर मध्यम पुरुष के सर्वनामों के रूप तीनों लिखों में ऐसे ही रहते हैं ।

१०६ प्रथम पुरुष "त" शब्द = वह

उ०	एकवचन	स्त्री०
१ प्र० से	तपु०	सा
२ द्वि० तं	तं	तं
३ तृ० तेषां	तेषां	ताए
४ च० तस्स	तस्स	तीसे
५ प० ताओ, तम्हा	ताओ, तम्हा	ताओ
६ प्र० तस्स	तस्स	तीसे, ताए
७ म० तंसि, तंमि	तंसि, तंमि	तीसे, ताए
उ०	बहुवचन	स्त्री०
१ प्र० ते	तपु०	ताओ
२ द्वि० ते	तार्, ताणि	ताओ
३ तृ० तेहिं	तार्, ताणि	ताओ
४ च० तेषिं	तेहिं	ताहिं
५ प० तेहितो	तेसिं	तासिं
६ प्र० तेषिं	तेहितो	ताहितो
७ म० तेसु	तेसिं	तासिं
	तेसु	तासु

## वर्तमानकाल (कर्तृवाच्य)

११६

“पास” = देख

	एक व०	बहु व०
प्र० पु०	पासइ वह देखता है	पासंति वह देखते हैं
म० पु०	पाससि तू देखता है	पासह तुम देखते हो
उ० पु०	पासामि मैं देखता हूँ	पासामो हम देखते हैं

“कर” = कर

	एक व०	बहु व०
प्र० पु०	करइ वह करता है	करंति वह करते हैं
म० पु०	करसि तू करता है	करह तुम करते हो
उ० पु०	करमि मैं करता हूँ	करमो हम करते हैं

११७ कुछ धातु ऐसे हैं कि जिन के रूप निपात सिद्ध होते हैं उन में से अस धातु का प्रयोग अधिक होता है इसलिये उसके रूप नीचे लिखे जाते हैं ।

	एक व०	बहु व०
प्र० पु०	अस्थि वह है	संति वह हैं
म० पु०	असि, सि तू है	स्थ तुम हो
उ० पु०	अंसि, मि मैं हूँ	मो हम हैं

११३ प्रथमपुरुष "क" शब्द = कौन

	पु०	एकवचन	स्त्री०
१ प्र०	के	मपुं० क	का
२ द्वि०	कं	क	का
३ तृ०	केण	केण	का
४ च०	कस्स	कस्स	कासे
५ पं०	कम्हा, काओ	कम्हा, काओ	काओ
६ ष०	कस्स	कस्स	कासे
७ स०	कसि	कसि	कासे

	पु०	बहु वचन	स्त्री०
१ प्र०	के	मपुं० काई	काओ
२ द्वि०	कं	काई	काओ
३ तृ०	केहिं	केहिं	काहिं
४ च०	केसिं	केसिं	कासिं
५ पं०	केहितो	केहितो	काहितो
६ ष०	केसिं	केसिं	कासिं
७ स०	केसु	केसु	कासु

११४ प्रथम पुरुष "य" शब्द = जो, "सद्य" = सय, अण = और, दूसरा, अवर = दूसरा, कयर = कौनसा, पर = दूसरा इत्यादि के रूप "क" शब्द के रूपों की तरह बनते हैं ॥

## क्रिया

११५ अर्धमागधी के धातु दो गणों में विभक्त हैं—पास गण और कर गण । 'पास' गण के धातुओं के परे प्रत्यय जैसे के तैसे लग जाते हैं परन्तु 'कर' गण के धातुओं और उनके प्रत्ययों के धीरे 'ए' और लगाया जाता है ॥

१२१ एक और प्रकार से भी भविष्यत् काल के रूप बनते हैं; जैसे—

एक व०

बहु व०

प्र० पु० पासिहिइ

पासिहिति

वह देखेगा

वह देखेंगे

म० पु० पासिहिसि

पासिहिह-

तू देखेगा

तुम देखोगे

उ० पु० पासिहिमि

पासिहिमो

मैं देखूंगा

हम देखेंगे

१२२ इस अवस्था में “कर” को “का” हो जाता है जैसे “काहिइ” वह करेगा, “काहिसि” तू करेगा ॥

१२३ प्रथम पुरुष एक वचन के रूपों में हि और इ दोनों मिल कर ही भी हो जाते हैं जैसे “काहिइ” या “काही”

१२४ निपातसिद्धः करिस्सं (धातु “कर” = कर) में करूंगा चोच्छं (धातु “वय” = वोल) में बोडूंगा ।

## आज्ञा कारी क्रिया (कर्तृवाच्य)

१२५

“पास” = देख

एक व०

बहु व०

प्र० पु० पासउ

पासंतु

वह देखे

वह देखें

म० पु० पास,पासाहि

पासह

तू देख

तुम देखो

उ० पु० पासामि

पासामो

मैं देखूँ

हम देखें

१२६

“कर” = कर

प्र० पु० करेउ

करेंतु

वह करे

वह करें

म० पु० करेहि

करेह

तू कर

तुम करो

उ० पु० करेमि

करेमो

मैं करूँ

हम करें

## भूतकाल (कर्तृवाच्य)

११८

“पास” = देख

	एक व०	बहु व०
प्र० पु०	पान्तिस्था	पांसिस्तु
म० पु०	उमने, मुने वा मीने देखा	उम्होंने, मुमने वा हमने देखा
उ० पु०		

“कर” = कर

	एक व०	बहु व०
प्र० पु०	कान्स्था, करिस्था	करँस्तु, करिस्तु
म० पु०	उमने, मुने वा मीने किया	उम्होंने, मुमने वा हमने किया
उ० पु०		

११६ निपातसिद्धरूपः

वयासो “यय” = योल धातु से बनता है। सब पुण्यों और वचनों में यही रूप रहता है।

अकासो “कर” = कर धातु से बनता है। सब पुण्यों और वचनों में यही रूप रहता है।

## भविष्यत् काल (कर्तृवाच्य)

१२० भविष्यत् काल के रूपों में ‘पास’ गण और ‘कर’ गण के धातुओं में कोई भेद नहीं रहता ॥

पास = देख

	एक व०	बहु व०
प्र० पु०	पासिस्तइ	पासिस्तंति
	वह देखेगा	वह देखेंगे
म० पु०	पासिस्तसि	पासिस्तंह
	तू देखेगा	तुम देखोगे
उ० पु०	पासिस्तमि	पासिस्तमो
	मैं देखूँगा	हम देखेंगे

इसी प्रकार “कर” धातु के रूप बनते हैं।

१३४ जय धातु के मध्य में अ हों तो उस अ को आ कर देते हैं जैसे—मरइ = वह मरता है, मारइ = वह मारता है, पडइ = वह गिरता है, पाडेइ = वह गिराता है ॥

## कर्मवाच्य

१३५ साधारण नियम कर्मवाच्य बनाने का यह है कि धातु और प्रत्यय के बीच इज्ज लगा दो, जैसे—सुणइ वह सुनता है, सुणिज्जइ वह सुना जाता है, करेइ वह करता है कारिज्जामि मैं किया जाता हूँ, मारामि मैं मारता हूँ मारिज्जामि मैं मारा जाता हूँ ॥

१३६ बहुत से धातुओं के कर्मवाच्यरूप निपात सिद्ध होते हैं परन्तु वास्तव में यह संस्कृत के ही विकृत रूप होते हैं जैसे लभइ (सं० लभ्यते) वह प्राप्त किया जाता है, मुचइ (सं० मुच्यते) वह छोड़ा जाता है, एज्जइ (सं० ज्ञायते) वह जाना जाता है, दिज्जइ (सं० दीयते) वह दिया जाता है ॥

१३७ कभी कर का कीर और पास का दीस भी बन जाता है जैसे—कीरइ वह किया जाता है, दीसइ वह देखा जाता है ॥

## अर्धक्रिया

१३८ कर्तृ वाच्य वर्तमान अर्धक्रिया दो प्रकार से बनती है ॥

१ धातु के साथ "अंत" जोड़ने से जैसे—

पासंत देखताहुषा	करंत करताहुभा -
चिट्ठंत ठैरताहुभा	चरंत चलताहुषा ॥

२ धातु के साथ "माण" लगाने से जैसे—

पासमाण देखताहुषा	करेमाण करता हुषा
------------------	------------------

इसी तरह चिट्ठमाण, चरमाण आदि ॥

१३९ कर्मवाच्य वर्तमान अर्धक्रिया बनाने के लिये धातु के कर्मवाच्य रूप के साथ अत या माण और जोड़ देते हैं जैसे—करिज्जंत या कारिज्जमाण किया जाता हुआ, मरिज्जंत या मरिज्जमाण मारा जाता हुआ दिज्जंत या दिज्जमाण दिया जाता हुआ, दीसंत या दीसमाण देखा जाता हुआ ॥



- १२७ मध्यम पुरुष एक वचन में हि की जगह सु भी हो जाता है जैसे—कहसु तू कह, सरसु तू याद कर ।
- १२८ निपातसिद्ध अर्थ (धातु "अस" हो) वह होते
- १२९ एक और प्रकार से आशाकारी क्रिया के रूप बनते हैं इस अवस्था में "पास" और "कर" गण के धातुओं में कुछ भेद नहीं रहता ।

१३० "पास" = देख

एक व )

बहु व )

प्र० पु०	पासेज्जा, पासिज्जा	} तु देखे	पासेज्जा, पासिज्जा	} तुम देखो
म० पु०	पासे (सि) ज्जा		पासे (सि) ज्जाह	
	पासे (सि) ज्जाहि	} मैं देखूँ	पासे (सि) ज्जासि	} हम देखें ।
व० पु०	पासे (सि) ज्जा,		पासे (सि) ज्जामि	

- १३१ धातु के साथ 'ए' जोड़ने से भी आशाकारी क्रिया के रूप बनते हैं । यह रूप सब पुरुषों और वचनों में ऐसे ही रहते हैं । पासे ( वह, तू, मैं, वह, तुम, हम ) देखे, करे ( वह तू. . ) करे ॥

## प्रेरक धातु

- १३२ जब किसी क्रिया का कर्ता उसे अन्य पुरुष के द्वारा कराए तब यह क्रिया प्रेरक धातु से बनने जाती है जैसे—करेइ = वह करता है, करावेइ = वह कराता है, कएइ वह काठता है, कएावेइ वह कटवाता है ॥

## अकर्मकधातु से सकर्मक धातु बनाने के नियम

- १३३ जब धातु के अन्त में 'आ' हो तो वह धातु "घ" जोड़ने से सकर्मक हो जाता है जैसे—पहाइ = वह म्हाता है, पहावेइ = वह नदनाता है, टाइ = वह टहरता है, टावेइ = वह ठहराता है ॥

२ धातु के साथ ऊर्ण या इऊर्ण लगाने से जैसे—नाऊर्ण

जानकर, दऊर्ण देकर, बंधिऊर्ण बांधकर ॥

३ धातु के साथ इत्तु लगाने से जैसे—जाणित्तु जानकर

बंधित्तु बांधकर ॥

१४६ बहुत से निपात सिद्ध हैं जैसे कट्टु ( धातु 'कर' ) करके, साहट्टु ( धा० साहर ) साकर, किष्ठा ( धा० कर ) करके, नष्ठा ( धा० ना ) जानकर इत्यादि ॥

## मूर्त अर्धक्रिया

१४७ मूर्त अर्धक्रिया दो प्रकार से बनती है ।

१ धातु के साथ इत्तप लगाने से जैसे—गच्छित्तप जाना, पासित्तप देखना, पुच्छित्तप पूचना, करित्तप करना ॥

२ धातु के साथ उं या इउं लगाने से जैसे—दाउं देना, काउं करना, पासिउं देखना, गिण्हिउं लेना ॥

१४८ मूर्त अर्धक्रिया प्रायः "कप्प" धातु के साथ इस तरह प्रयुक्त होती है—नो कप्पइ साहृणं मुसावयणं भासित्तप नहीं कल्पता साधुर्षो को झूठ वचन बोलना अर्थात् साधुर्षो को झूठ नहीं बोलना चाहिये, एर्षसि परिव्वायमाणं नो कप्पइ सावण्णाई भूसणाई धारित्तप इन परिव्राजकों को नहीं कल्पता सोने के भूषण पहिनना अर्थात् इन परिव्राजकों को सोने के भूषण नहीं पहिनने चाहिये ।

१४९ मूर्त अर्धक्रिया प्रयोजन अर्थ में भी आती है जैसे—अहं तव पुत्तं पासिउं पश्य आगए में यहां तेरा पुत्र देखने आया हूं, नो खलु जाया ! अम्हे इच्छामो खणमचि विष्पओगं सहित्तप हे पुत्र हम जण भर भी ( तेरी ) जुदाई सहना नहीं चाहते ।

## समासप्रकरण

१५० जब दो शब्द इस प्रकार से मिलाए जाते हैं कि उन के बीच में फारक सम्यन्ध को घतलाने वाले अन्यय न लगाने तो वह दोनों शब्द मिलकर एक शब्द की तरह प्रयुक्त होते हैं और

- १४० कर्तृवाच्य भूत अर्ध क्रिया बनाने के लिये कर्मवाच्य भूत अर्ध क्रिया के साथ "वंत" लगा देते हैं। हिन्दी में इस के मुकाबले का कोई रूप नहीं इस लिये इस का अर्थ भूत काल की (कर्तृवाच्य पूर्ण) क्रिया से किया जाता है; जैसे—रखिय वते वह रखा करता मया = उसने रखा की, हसियवते वह हँसता मया = वह हँसा ॥
- १४१ कर्मवाच्य भूत अर्ध क्रिया प्रायः धातु के साथ "इय" लगाने से बनती है, जैसे—रखिय = रखा हुआ, भणिय = खाया हुआ, मारिय = मारा हुआ ॥
- १४२ बहुत से धातुओं के इस अर्ध क्रिया के रूप निपात सिद्ध ही हैं जैसे गय (धातु गच्छ) गया हुआ, कड (धातु कर) किया हुआ, दिट्ट (धातु पास) देखा हुआ इत्यादि ॥
- १४३ भविष्यत् अर्ध क्रिया का कर्तृवाच्य में प्रयोग नहीं होता कर्मवाच्य में होता है। इस के रूप प्रायः दो प्रकार से बनते हैं—
- १ धातु के साथ "णिञ्ज" लगाने से जैसे—करणिञ्ज किया जाना चाहिये, पूरणिञ्ज पूना जाना चाहिये ॥
  - २ धातु के साथ "इयव्व" लगाने से जैसे—पासियव्व देखा जाना चाहिये पुच्छियव्व पूछा जाना चाहिये, जाणियव्व जानना चाहिये इत्यादि ।
- १४४ कई निपात सिद्ध होते हैं जैसे कायव्व किया जाना चाहिये, करना चाहिये, करने योग्य, पेञ्ज पिया जाना चाहिये, पीना चाहिये, पीने योग्य इत्यादि ।

## आजक अर्ध क्रिया

- १४५ इस के बनाने के कई प्रकार हैं परन्तु यह तीन बहुत आम हैं।
- १ धातु के साथ "इत्ता" लगाने से जैसे—गच्छित्ता जाकर, पासित्ता देखकर, करित्ता करके, इत्ता के स्थान में इत्ताएँ भी लगाया जाता है जैसे—पासित्ताएँ देखकर, चरित्ताएँ चयन करके ॥

१५३ इन के अतिरिक्त एक अव्यय समास भी होता है परन्तु उसका प्रयोग बहुत कम देखने में आता है; जैसे—अणुगंगं गंगा के साथ साथ, आणुपुर्व्य = अनुपूर्वों के क्रम से इत्यादि ॥

१५४ समासों का आपस में अथवा शब्दों के साथ मिल कर फिर समास हो सकता है; जैसे—पंचिदियजीवा षंभ इन्द्रियों वाले जीव । यहां पहिले पंचिदिय विशेषण समास है फिर पंचिदिय और जीव मिल कर संज्ञा समास हो गया ॥ सत्यकोस-हृत्थे शस्त्रों का कोश<sup>१</sup> है हाथ में जिसके । यहां पहिले सत्यकोस संज्ञा समास है—सत्याणु कोसे = शस्त्रों का कोश, फिर सत्यकोस और हृत्थ मिल कर विशेषण समास हो गया ॥

## सन्धिप्रकरण

१५५ जब दो स्वर एक दूसरे के साथ ही आवें तो उन में कुछ विकार हो जाता है; उस विकार को सन्धि कहते हैं । उसके यह नियम हैं :—

१५६ जब अ<sup>२</sup> और अ इकट्ठे आवें तो उन दोनों के स्थान में आ हो जाता है जैसे—जीव+अजीव=जीवाजीव, य+अधि=याधि ॥

१५७ जब अ के परे अ हो और उस के पीछे अनुस्वार या संयुक्त वर्ण<sup>३</sup> ( दुक्त अक्षर ) हो तो अ और अ मिल कर अं हो जाता है जैसे—

मरण+अंत=मरणांत; मरण है अन्त जिसका

उत्तर+अड्ड=उत्तरड्ड; उत्तरार्ध<sup>४</sup>, उत्तर का आधा हिस्सा

१५८ जब अ के परे इ हो तो दोनों को मिल कर ए हो जाता है जैसे :—

१ जर्सीही के बीजारों का बक्क (Surgical bosc) । २ यहां पर अ, इ, उ कहने से दोनों प्रकार के वर्णों छोटे बड़े अभा इई उऊ का ग्रहण किया जाता है ॥

३ झ, बझ, गग, गध, क्त, व आदि संयुक्त वर्णों वा दुक्त अक्षर कहलाते हैं ॥

उस एक शब्द को समास कहते हैं; जैसे—जणसद्दे ( जणस्स सद्दे = आदमी का शब्द ), भत्तपाण्येला ( भत्तपाणस्स वेला = (खाने पीने का समय), जियलोहे ( जिण लोहे जेण = जीता है लोभ जिउने पेला), सेयंवरै ( सेयं अंवरं जस्स = रवेत कपड़ा है जिमका वेसा घर्मात् रवेताम्बर ) ॥

१५१ समास दो प्रकार के होते हैं संज्ञा और विशेषण ।

संज्ञा समास कई प्रकार से बनते हैं ।

१ जब दोनों संज्ञाएं प्रथमा विभक्ति वाली हों । ऐसे समास प्रायः बहुवचन में आते हैं, जैसे—जीवाजीव ( जीवे य अजीवे य = जीव और अजीव ), नरपसूणं ( नरे य पसूय नरपसूयो तेति नरपसूणं = आदमी और पशु उनका = नर पशुओं का ) ॥

२ जब पहिली संज्ञा द्वितीया से लेकर सप्तमी पर्यन्त किसी विभक्ति की हो और दूसरी संज्ञा प्रथमा विभक्ति की हो जैसे—गिहगए ( गिहं गए = घर को गया हुआ ), संजमसंजुत्ते ( संजमेण संजुत्ते = संजम से संजुक्त ), सुहधम्मे ( सुहाए धम्मे = सुख के लिये धर्म ), चोरभयं ( चोराओ भयं = चोर से डर ), पुण्णफलं ( पुण्णस्स फलं = पुण्य का फल ), गीयकुसले ( गीयंसि कुसले = गीत गाने में कुशल )

३ जब पहिला शब्द विशेषण हो और दूसरा संज्ञा, और उन में विशेषण विशेष्य संबन्ध हो; जैसे—नीलुत्पलं ( नीलं उत्पलं = नीला कमल ) ।

१५२ विशेषण समास भी कई प्रकार से बनते हैं

१ दो विशेषणों को मिलाने से, जैसे—सेयरत्ते ( सेए रत्ते = रवेत-रत्त ) ॥

२ जब दोनों शब्द इसतरह मिलें कि उन में "ज" शब्द की द्वितीया से सप्तमी पर्यन्त किसी विभक्ति का सम्बन्ध हो जैसे उत्पण्णससए ( उत्पण्णे संसए जस्स = पैदा हुआ है संशय जिउके = संशय वाला ), जियकोहे ( जिण कोहे जेणं = जीता है क्रोध जिउने = जीते हुए क्रोध वाला ), पांचिंदिए ( पांच इंदियाणि जस्स = पांच हैं इन्द्रियां जिउके = पांच इन्द्रियों वाला ) ॥

(पुं०) पंचम, (स्त्री०) पंचमी पांचवी; (पुं०) अय, (स्त्री०) अया बरती; (पुं०) दारय, (स्त्री०) दारिया दारिका ।

१६५ भावप्रत्यय जब किसी शब्द के साथ त्त या-त्तण लगाया जावे तो उस का भाव अर्थ हो जाता है जैसे—देव से देवत्त देवपना, पुत्त से पुत्तत्त पुत्रपना, आयरिय से आयरियत्त या आयरियत्तण आचार्यपना तत्कर से तत्करत्तण चोरपना ॥

१६६ स्वामित्व प्रत्यय जब किसी संज्ञा के साथ-वंत या मंत जोड़ा जाय तो उस का अर्थ उस वस्तु का स्वामी या उस वस्तुवाला हो जाता है जैसे—धण से धणवंत धनवाला, गुण से गुणवंत गुण वाला, मइ से मइमंत मतिवाला, धिहुमान्, इत्यादि ॥

१६७ प्रत्यय और भाँ बहुत हैं परन्तु उन के लिखने की यहाँ कुछ आवश्यकता नहीं ॥

## वाक्यप्रकरण

१६८ गद्य लिखने में शब्द प्रायः उसी क्रम से रखे जाते हैं जैसे हिन्दी गद्य लिखने में जैसे—

देवदिएणे गच्छइ<sup>१</sup> । तकरे धणं चोरइ ।

देवदत्त जाता है चोर धन को चुराता है

अहं कूवाओ जलं कडढामि । में फूँ मे जल निकालता हूँ

१६९ पद्य अर्थात् श्लोकों में शब्दों का स्थान नियत नहीं है ।

सुणेइ मे एगगमणा मगं बुद्धेहि देसियं ।

सुनो मुझसे एकाग्र मन मार्ग को जिनों से बतलाया हुआ

अर्थात् जिन भगवान के कहे हुए मार्ग को मुझसे एकाग्रमन होकर

सुनो ॥

१ दिवण = दत्त = दिया हुआ । उमादीन, मातादीन आदि हिन्दू नामों में "दीन" शब्द प्राकृत "दिवण" शब्द से निकला है न कि अरबी "दीन" शब्द से जैसा कि मुसलमान नामों में ॥

राय + इति = रा ( य् ) एति = राएति; राएति  
महा + इति = महोति; महोति

१५९ जब अ के परे इ हो और उस के परे अनुस्वार या दुसरे अक्षर हो तो अ और इ मिल कर इ हो जाता है जैसे—

देव + इद = देविद देवेन्द्र, देवों का राजा

महा + इद्दी = महिद्दी बड़ी शक्ति

१६० जब अ के परे उ हो तो दोनों मिल कर ओ हो जाता है जैसे—

सीय + उयग = सीओयग सीतल

महा + ऊसय = महोसय बड़ा जलना, महोत्सव

१६१ जब अ के परे उ हो और उस के परे अनुस्वार या दुसरे अक्षर हो तो अ और उ मिल कर उ हो जाते हैं जैसे—

पुरिस + उत्तम = पुरिसुत्तम उत्तम पुरुष

जिण्ण + उज्जाण = जिण्णज्जाण पुतना काग

१६२ जब अनुस्वार के परे कोई स्वर हो तो अनुस्वार का म् हो कर उस स्वर में मिल जाता है जैसे—

धम्मं आइप्पइ = धम्ममाइप्पइ यह धर्म का उपदेश करता है  
फलं इच्छइ = फलमिच्छइ यह कण चाहता है

१६३ कभी कभी दो शब्दों का समास करने में, जिनमें से दूसरे शब्द के आदि में कोई स्वर हो, एक अनुस्वार ऊपर से लगा दिया जाता है जो उपर्युक्त नियम से म् हो कर दूसरे शब्द के आदि के स्वर से मिल जाता है जैसे—

अग्निग इय = अग्निमिव अग्नि की तरह

दीह अद्दा = दीहमद्दा लम्बे रास्ते वाली

## प्रत्यय

१६४ स्त्री प्रत्यय जब पुल्लिङ्ग शब्द के अन्त में अ हो तो अ को ई (और कभी आ) से बदलने से यह शब्द स्त्रीलिङ्ग हो जाता है जैसे—( पुं० ) भुंजमाण, ( स्त्री० ) भुंजमाणी भोगती हुई;

अन्नपाणं विणुस्तउ, तुभ्मं किंचि न दलइस्सामो ।”  
 अन्न पान नाय हो नाये तुभ्मको कुब भी न देगे  
 तण्णं हरिणसयले घयासी, “जइ  
 तव हरिकेशवल घोला अगार  
 तुभ्मे मम पयं अन्नपाणं न दलइस्सह, तथा  
 तुम मुके यह अन्न पान न दोगे तव  
 तुभ्म अणेण जण्णेणं कोधि लामो न भविस्सइ ।”  
 तुम्हें इस यज्ञ से कोई लाभ न होगा  
 तण्णं ते धंभणा रायकुमारे सहावेंसु,  
 तव उन ब्राह्मणों ने राज कुमारों को बुलाया  
 ते राय कुमारा तं इत्ति तालेंसु ॥  
 उन राजकुमारों ने उध अर्पि को मारा पीटा

### नमुक्कारमंतं

नमस्कार मन्त्र

नमो अरिहंताणं । नमो सिद्धाणं ।  
 नमस्कार (हो) अहंनों के तार्ई नमस्कार (हो) सिद्धों के तार्ई  
 नमो आयरियाणं । नमो उयज्झायाणं ।  
 नमस्कार (हो) आचार्यों के तार्ई नमस्कार (हो) उपाध्यायों के तार्ई  
 नमो लोए सत्त्वसाहूणं ।  
 नमस्कार (हो) लोक में सब साधुओं के तार्ई  
 एस पंच नमुक्कारो, सत्त्वपावप्पणासणे ।  
 यह पञ्च नमस्कार (रूप मन्त्र) सर्व पार्थों का नाश करने वाला है  
 मंगलाणं च सव्वेत्ति, पढमं हवर मंगलं ॥  
 मंगलों में से और सब में से प्रथम होता है मंगल

### लोगस्स उज्जोयगरे

लोक के उद्योग करने वाले

लोगस्स उज्जोयगरे, धम्म तित्थयरे जिणे ।

लोक के उद्योग करने वालों को, धर्म के तीर्थंकरों को जिनों को

अरिहंते किच्चइस्सं, चउयीसं पि केवली ॥ १ ॥

अहंनों को (मैं) मराहंगा चौबीस ही केवलियों को

उसममजियं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमई

अपम को अजित को और (मैं) बन्दिता पूं सम्भवको अभिनन्दको और सुमतिको



जइत्ता विउले जएणें भोइत्ता समणमाइणें ।  
 यह करके बहुत यहाँ को विता कर समण माइणों को  
 दइत्ता भुइत्ता य जिउत्ता य तस्रों गच्छसि इत्तिया ! ।  
 देकर लाकर चीर यह करके चीर तब जाता है हे अत्रिय  
 अर्थात् हे अत्रिय ' बहुत से यह करके समण माइणों को विताइत,  
 (दान; देकर भोग भोगकर चीर यह करके (इसको पीछे तु ने जाना है

अभ्यास ध्यान में पढ़ो :-

सोयागकुलसंभूए हरिपसयले नामं एणे भिक्खु  
 सबदान कुल में उत्पन्न हरिकेशवल नामा एक माधु  
 श्रासी । से हरिपसयले अन्नया 'कयाइ' भिक्खु-  
 या यह हरिकेश चल एक दका भिक्खा के  
 ट्ठाए एणं वंमणजणवाइयं उवागए । ते  
 गर्भ एक शाइणों की यह शाअर में आया यह  
 अणारिया तं तवोयल्लेणं परिसोसियं एजमाणं  
 आनार्य भोग उभ तपोवन से भूले हुए को आता हुआ  
 पासित्ता उवहसिणु । एणं उवहसियसमाणे  
 देण कर हंने एण प्रकार हंमी किया हुआ  
 से हरिपसयले अर्थ घयासी, - "एएणं हिंसगा,  
 यह हरिकेशवल पूं बोला यह हिंसक  
 अजि य इंदिया, अर्थमचारिणो धाला संति ।"  
 अजितेन्द्रिय अन्नक्षवातो भूख है  
 तए एं ते वंमणा हरिपसयलं पुच्छिउत्तु, "तुम  
 तत्र उन माइणों ने हरिकेशवल को पूछा  
 के असि ? केणट्ठेणं इह मागए ?" ।  
 कौन है किस अर्थ से यहां भाषा है  
 तए एं से हरिपसयले घयासी, "अहं समणे  
 तत्र यह हरिकेशवल बोला मैं समण  
 भिक्खु, भिक्खुकाले अन्नस्त अट्ठा इहमागए ।  
 भिउत्तु हूं भिक्खा के समय में अन्न के अर्थ से यहां आया हूं  
 तएणं ते वंमणा घयासी, "अयं भोयणं  
 तत्र यह माइण बोले यह भोजन  
 वंमणाणं उववस्वडं अत्थि; अवि एयं  
 माइणों के लिये बना है चाड़े यह

१. मियापुत्ते दारण ।

तेषां कालेषां तेषां समेषां मियागामे नामं नयरे होत्या  
 (अथो) । तस्म शं मियागामस्म नयरस्म बहिया उत्तरपुरस्थिमे  
 भाए चंद्रखपायवे नामं उजाणे होत्या (वयराअथो) । तय शं  
 मस्म जनखस्म जनवाययणे होत्या (वयराअथो) ॥१॥

तय शं मियागामे नयरे विजय नामं स्वत्तिय राया परिव-  
 तस्म शं विजयस्म स्वत्तियस्म मिया नामं देवी होत्या । तस्म  
 विजयस्म स्वत्तियस्म पुत्ते मियाए देवीए अत्तए मियापुत्ते नामं  
 होत्या जाइअंधे, जाइभूए, जाइवहिरे, जाइपंगुले हुंडे य वायवे  
 तय शं तस्म दारगस्स हत्या वा पाया वा फगणा वा अच्छी  
 वा केवलं नेमि अंगोअंगारां आगइमित्तं होत्या ॥२॥

तय शं सा मिया देवी तं मियापुत्तं दारगं रहसियंस्ति भूमि-  
 न रहसियंशं भत्तपाणेणं पडिजागरमाणी २ विहरइ ॥३॥

तय शं मियागामे नयरे एमं जाइअंधे पुत्तिसे परिवसइ । से  
 गेणं सचकवुएणं पुत्तिसेणं पुरअो दंडएणं पगडिजमाणे २  
 डाहडसीसे मच्छियाचडगरेणं अगिणजमाणमणे मियागामे  
 गिहे गिहेणं कलुणं रडवडियार विस्ति कल्पेमाणे विहरइ ॥४॥

तेषां कालेषां तेषां समेषां समणे भगवं महावरे समोअन्हे ।  
 सा निगया । तय शं मे जाइअंधपुत्तिसे तं महयाजराअहं सुणेइ  
 तं सयकवुयं पुत्तिं एवं वयान्नी, "किणणं वेदाणुप्पिया! अज

पउमपहं सुपासं, जिणं च चंद्रपहं वंदे ॥२॥  
 पचप्रम को सुपासं को जिन को चौर चन्द्रप्रम को (मि) बन्दता हूं  
 सुविहिं च पुष्कदंतं, सीयल-सिउत्तस-धातुपुज्जं च ।  
 सुविधि को चौर पुष्कदन्त को सीयल को, चंप्रांग को धातुपुज्ज को चौर  
 विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संति च वंदामि ॥३॥  
 विमलको वनलको ओर जिन को धर्म को शांति को चौर बन्दता हूं  
 कुंथु शरं च मणिं, वंदे मुणिसुन्दर्यं नमिजिणं च ।  
 कुंथको शर को और मणि को बन्दता हूं मुनि सुन्दर को नमिजिन को चौर  
 वंदामि रिद्धनेमिं, पासं तहं पद्धमाणं च ॥४॥  
 बन्दता हूं अरिहनेमि को पार्श्व को तथा धर्म मान को चौर  
 एवं मय अभिसंथुया, विहुय रय  
 इस प्रकार मुझे दण्डि किये हुए उतर गईं, हे कर्म कृपी  
 मला पहीणजरभरणा ।  
 धुनि को मैल जिन को नष्ट होगयां हे बुझावा चौर मरण जिन को  
 चउयांसं पि जिणयरा, तिरथयरा मे पसीयंतु ॥ ५ ॥  
 चौघोष हो जिन पर तीर्थंकर मुझ पर प्रसन्न होवें  
 किच्छिय-वंदिय-महियां, जेए लोंगस्स उत्तमा सिद्धा ।  
 स्तुति, बन्दना चौर पूजा किए गए जितने लोक के उसम सिद्ध हैं  
 आरोग-बोधि-लामं, समाधिपर मुत्तमं वंतु ॥६॥  
 आरोग्य और ध्यान की प्राप्ति समाधिपर उत्तम देवें  
 चंदेसु निम्मलयरा, आइसेसु अदियं -पयासयरा ।  
 चन्द्रों में से अधिक निर्मल पुर्यों में से अधिक प्रकाश करने वाले  
 सागर पर गभीरा, सिद्धा सिद्धि मम दिसंतु ॥७॥  
 समुद्र की तरह बड़े गभीर सिद्ध विधि मुझे दिलावें (देवें)

## १. मियापुत्ते दारण ।

तेणं कालेणं तेणं समणं मियागामे नामं नयरे होत्था (वगणओ) । तस्स णं मियागामस्स नयरस्स वहिया उत्तरपुरस्सिमे दिमीमाए चंद्रणपायवे नामं उज्जाणे होत्था (वगणओ) । तत्थ णं सुहम्मस्स जम्बस्स जम्बवाययणे होत्था (वगणओ) ॥१॥

तत्थ णं मियागामे नयरे विजय नामं खत्तिए राया परिवसइ । तस्स णं विजयस्स खत्तियस्स मिया नामं देवी होत्था । तस्स णं विजयस्स खत्तियस्स पुत्ते मियाए देवीए अत्तए मियापुत्ते नामं दारण होत्था जाइअंधे, जाइमूए, जाइवहिरे, जाइपंगुले इडे य वायवे य । नदिय णं तस्स दारणस्स हत्था वा पाया वा कणणा वा अच्छी वा नासा वा केवलं तेसि अंगोधंगाणं आगइमित्ते होत्था ॥२॥

तए णं सा मिया देवी ते मियापुत्ते दारणं रहस्सियंसि भूमि-  
धरंसि रहस्सियणं भत्तपाणेणं पडिजागरमाणां २ विहरइ ॥३॥

तत्थ णं मियागामे नयरे एगे जाइअंधे पुरिसं परिवसइ । से णं एगेणं सचकलुएणं पुरिसेणं पुरओ इंडएणं पगटिज्जमाणे २ कुट्टहडाहडमीसे मच्छियाचडगरेणं अणियाजमाणमणे मियागामे नयरे गिहे गिहेणं कलुएणं रडवडियार विस्ति कण्येमाणे विहरइ ॥४॥

तेणं कालेणं तेणं समणं समणे भगवं महावीरि समोसडे । परिमा निग्गया । तए णं से जाइअंधपुटिसे ते महयाज्जणसइं नुणेइ २ सा ते मयकपुयं पुरिसं एवं वयाम्मा, "किण्णं देवाम्पिया! अज्ज

मियागामे नयरे इन्द्रमहे इ वा इन्द्रमहे इ वा जगगो एवे महया जगगो  
मुणेमि ?

एव गन्तु देवाणुष्विया ! समणे भगवं महावीरि एव समो  
महे" ॥५॥

तए शां से जाइअंधपुरिमे सचपलुएणं पुरिमे एवे वयासी.  
"गच्छामो शां देवाणुष्विया ! अमहे वि समणं भगवं महावीरि एव  
वाम्पामो" ॥६॥

तए शां से जाइअंधपुरिमे सचपलुएणं पुरिसेणं पुरिमे  
दंडएणं पगदिज्जमाणे २ जेणेव समणे भगवं महावीरि तेणेव उवा  
गच्छइ २ ता तिसुत्तो अयाहिणं पयाहिणं करेइ २ ता वं  
नभंमइ जाव पज्जुवासर ॥७॥

तए शां समणे भगवं महावीरि तीसे महइमहालियाए परिमा  
धम्मं कहेइ, परिमा जामेव दिमि पाउअया तामेव दिमि परि  
गया ॥८॥

तए शां समणस्स भगवओ महावीरस्स जेहे अंतियागरी  
भूइ नामे अणगारे ते जाइअंधपुरिसं पासित्ता समणं भगवं महावी  
एवे वयासी, "अत्थि शां भंते ! केइ पुरिमे जाइअंधे जाइअंधरुवे ?

"हंता अत्थि"

"कहिं शां भंते ! से पुरिमे जाइअंधे जाइअंधरुवे ?"

"एवं खलु गोयमा ! इहेव मियागामे नयरे विजयस्स ख  
यस्स पुत्ते मियाए देवीए अत्तए मियापुत्ते नामं दारए जाइ  
जाव विहरइ" ॥९॥

तए शां से भगवं गोयमे समशां भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ  
 २ ता एवं वयासी, "इच्छामि शां भंते ! अहं तुम्हेहि अम्भगुगणाए  
 समशां मियापुत्तं दारयं पामित्तए" ॥

"अहासुहं देवाणुप्पिया !" ॥२०॥

तए शां से भगवं गोयमे जेगोय मियाए देवीए गिहे तेणोय  
 उवागच्छइ २ ता मियादेवि एवं वयासी, "अहं शां देवाणुप्पिए ! नव  
 पुत्तं पामिउं हव्वमागए" ॥२१॥

तए शां सा मियादेवी मियापुत्तस्स दारयस्स अणुमगाजाए  
 चत्तारि पुत्ते सव्वालंकारविभूसिए करेइ २ ता भगवओ गोयमस्स  
 पादेसु पाडेइ २ ता एवं वयासी, "एए शां भंते ! मम पुत्ते  
 पासह" ॥२२॥

तए शां से भगवं गोयमे मियादेवि एवं वयासी, "नो खलु  
 देवाणुप्पिए ! अहं एए तव पुत्तं पासिउं हव्वमागए । तत्थ शां  
 जे से तव जेठे पुत्ते मियापुत्ते दारए जाइअंधे अंधरूये, जं शां तुमं रह-  
 सिधंभि भूमिघरंभि रहसिएशां भत्तपागोशां पडिजागरमाणी विहरमि  
 ते अहं पासिउं हव्वमागए" ॥२३॥

तए शां सा मियादेवी भगवं गोयमं एवं वयासी, "ने के शां  
 भंते ! तहारूये शाणी वा तवस्सी वा जेशां एयमट्ठे सम्मं रहस्सकर  
 तुम्भं हव्वमकखाए ?"

तर शां भगवं गोयमे मियं देवि एवं वयासी, "एवं खलु दे-  
 वाणुप्पिए ! मम धम्मायारिइ समशां भगवं महावीरे सव्वएण सव्व-  
 दारिणी, तओ शां अहं एयमट्ठं जाणामि" ॥ २४ ॥

जाव च शां मिया देवी भगवया गोयमेणं सदिं एयमट्ठं संल-  
 यइ ताव च शां मियापुत्तस्स दारयस्स भत्तपाणवेला जाया यावि  
 हाया ॥ २५ ॥

न त्वा सा मिया देवी भगवं गोयमे एवं यवामी, "तुम्हे र्शो भो  
 इह जेय विष्टा ज्ञान मर्त तुम्हे मियापुत्रे दारुय उचर्दं मेमि" ति कर्तु  
 जेगाय ननरागा उच्य तेगाव उवागच्छइ २ सा धंयपरिवाह्ये कर्त  
 - सा एव कट्टमर्गाह्ये गिगहइ २ सा मे विडलेतां अमरुतां पारि  
 यामगां सादमगां भरेइ २ सा जेगेव भगवं गोयमे मेम्युव उवागच्छ  
 - सा एव यवामी, "एह सां तुम्हे भंते ! मम विष्टयां अणुगच्छ  
 न अर्त तुम्हे मियापुत्रे दारुय उचर्दं मेमि" ॥ १८ ॥

तए गं सा मिया देवी जेगेव भूमिपरं तेगेव उवागच्छइ २  
 ना अउपुंडेणं धंयगां मुहं धंयगां भगवं गोयमे एवं यवामी,  
 "तुम्हे वि सां भंते ! मुहपनिवार मुहं धंयह" ॥ तए सां भगवं गोयमे  
 मिया देवी । एवं तुभे मयागां मुहपनिवार मुहं धंयह ॥ १९ ॥

तए सां सा मिया देवी परंमुण भूमिपरं वृत्तारे विहाडां ।  
 मम गं गंवे निगच्छइ स जहा नाम । अहिमष्टे इजातयो वि अणि  
 इतराए चय ॥ २० ॥

तए सां मियापुत्रे दारुय तम्म विपुलरम अमराणां एव  
 गंवेणं अभिनूए समाणं नेमि अमराणां गंवे मुच्छिणं गंइइए ॥ २१ ॥  
 तए सां तं अमराणां आमापसां विपरिणमइ २ सा तिष्ठा  
 भय विद्धंसइ । तयो पच्छा पूययाए मोणियाए य परिणमइ । सं तं पि  
 य सां पूयं च मोणियं च आहोइ ॥ २० ॥

तए सां भगवचो गोयमरुव ते मियापुत्रे दारुय पामिता  
 अयंमयाकेय अज्मत्थिर ममुप्यज्जित्था, "आहो सां इमे दारुय पु  
 कडाणां असुमाणां कम्माणां पायफलं पच्छाणुभयमारो विहइ  
 न मे दिट्टा नरगा वा नरहया या, पच्छकयं सलु अयं पुरिसं नरय  
 पडिठयं धेयणां धेपइ" ति कट्टे मियं दवि अपुच्छइ २ सा मिया  
 देवीए विहाओ निगच्छइ २ सा जेगेव ममगां भगवं महावीरे तेगां

उवागच्छ २ ता एवं च्यामी, "अहं खलु भंते ! तुभेहि अम्भणुयणाए  
समाणे जेणोअ मियाए देवीए गिहे तेणोव उवागच्छामि जाव  
आहारो । मे णं भंते ! पुरिसे पुव्वभवे के आमी ? किं नामए ? किं गो-  
यए ? किं समायरिता एवं विहरइ ?" ॥ २१ ॥

"एवं खलु गोयमा ! इहेव जंबुद्वीवे दीवे भारहे वासे संयदु-  
वारो नामं नयरे होत्था (वग्गणओ) तत्थ णं संयदुवारो नयरे धणवई  
नामं राया होत्था (दग्गणओ) तस्स णं संयदुवारस्स नयरस्स दा-  
हियापुरत्थिमे दिस्सीभाए विजयवड्ढमाणं नामं खेडए होत्था । तस्स  
णं विजयवड्ढमाणस्स खेडस्स पंच गामसयाइं आभोए यावि होत्था  
॥ २२ ॥

विजयवड्ढमाणो रेडे एकाइं नामं रट्ठकूडे होत्था अहम्मिण  
जाव दुप्पडियाणंदे । से एकाइं रट्ठकूडे विजयवड्ढमाणस्स खेडस्स  
पंच गामसयाइं बहूहिं करेहिं भगेहिं बुद्धदीहिं उक्कोडियाहिं य  
उत्त्वान्तिमाणो निद्धणे करेमाणो विहरइ ॥ २३ ॥

तए णं से एकाइं रट्ठकूडे विजयवड्ढमाणस्स खेडस्स बहूणं  
राईसरतलवरसत्थवाहाणं अणणेमिं च बहूणं गामेहणपुग्गिमाणं  
बहूसु कज्जेसु य कारणेसु य सुणेमाणो भणइ "न सुणेमि", असुणे-  
माणो भणइ "सुणेमि" त्ति । एवं पासमाणो भासमाणो गिणहमाणो  
जाणमाणो ॥ एवं मे एकाइं रट्ठकूडे यहुं पायकम्मं पंधमाणो विह-  
रइ ॥ २४ ॥

तए णं तस्स एकाइस्स रट्ठकूडस्स सरीरगंसि अणुणया  
फयाइ जमगसमगं मोलस रोगायंका पाउब्भूया तं जहा मासे १  
वासो २ जरे ३ दाहे ४ कुच्छिसूले ५ भगंदरे ६ अरिसए ७ अजीरए ८



द्विष्टिमूले ६ मुद्रमूले १० अकारिण ११ अचिह्नवेयगा १२ पयशावे-  
यगा १३ कंडुप १४ उदरे १५ कोठे १६ ॥२५॥

तए शां मे एकाई रट्टकूडे सोलमहि रोगायंकेहि अभिभूए  
समागो कोडुवियपुरिसे महायेइ २ सा एवं घयासी, "गच्छहं शां  
तुम्हे देवाणुपिया ! विजयवड्डमाणं खेडे मिघाडग-तिय-चउक-  
चघर-महापहेसु महया २ सहेणं उग्घोमेमाणा एवं चयह, 'एवं सलु  
देवाणुपिया ! एकाइसरीरगंसि सोलस रोगायंका पाउम्भूया, तं जहा  
सासे जाव कोठे । तं जह शां इच्छइ विजे वा विजपुत्ते घा, जाणए  
वा जाणपुत्ते वा एकाइस रट्टकूडसम मोलसएहं रोगायंकायां एग-  
मवि रोगायंकं उचसामित्तए, तरस शां एकाई रट्टकूडे त्रिपुलं अत्य-  
संपयाणं दलयइ । एवं दोचं पि तथं पि उग्घोमेह" ॥ ते कोडुविय-  
पुरिमा तहेव फरेति ॥२६॥

तए शां विजयवड्डमाणं खेडे इमं पयारुवं उग्घोसणं सोचा  
निसम्म यहवे विजा सत्यकोसहत्थगया सएहि २ गिहेहितो पडि-  
निसयमंति २ सा जेणव एकाई रट्टकूडे तेणव उवागच्छंति २ सा  
एकाइसरीरग परामुसति २ सा तंसि रोगाण निदाणं पुच्छंति  
२ सा एकाइरट्टकूडसस यहहि अभिभगेहि, उच्चट्टेणहि, सिणेहपाणेहि,  
चमणेहि, विरेयणेहि, सिचणेहि, अघपहाणेहि, अणुवाणेहि, पत्थि-  
कम्भेहि, निरुहेहि, सिरावधेहि, तच्छणेहि पच्छणेहि, छल्लेहि,  
मूलेहि, कंदेहि, पत्तेहि, पुफ्फेहि, धीरहि, सिलियाहि गुलयाहि, ओस-  
हेहि, मेसजंहेहि य इच्छंति तेमि मोलसएहं रोगायंकाया एगमवि  
रोगायंकं उचसामित्तए । नो चेव शां मंचापति उचसामित्तए ॥ २७ ॥

तए शां ते यहवे विजा जाहे नो मंचापति तेमि सोलसएहं  
रोगायंकाया एगमवि रोगायंकं उचसामित्तए ताहे संता नेता परतंता  
जामेव दिंसि पाउम्भूया तामेव दिंसि पडिगया ॥ २८ ॥

तए शां मे एकाई रड्कूडे सोलसहिं रोगायकेहिं अभिभूप  
समाणे रजे य रडेठ य मुच्छह । रजे पथमाणे अभिलसमाणे अट्ट-  
दुहट्टयसट्टे अड्ढाड्जाइ वाससयाइ परमाउ पालइ २ ता कालमासे  
काल किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढधीए उवकोसिण सांगरोचम-  
दिठइएसु नेरइएसु नेरइयत्ताए उववणणे ॥ २६ ॥

से शां तओ अशातर उवट्टिता इहेव मियग्गामे नयेरे मियाए  
देवीए कुच्छिसि पुत्तत्ताए उववणणे । तए शा तीसे मियाए देवीए  
सरीरे वेयणा पाउम्भूया उज्जला जाव जलंता । जं पभिइ च शां मिया-  
पुत्त दारण मियाए देवीए कुच्छिसि गम्भत्ताए उववणणे, त पभिइ  
च शां मिया देवी विजयस्स खत्तियस्स अणिट्ठा, अकंता अपिया  
जाया यावि होत्था ॥ ३० ॥

तए शा तीसे मियादेवीए अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्ताकाल-  
समयासि कुडुवजागरियं जागरमाणीए इमे अज्जात्थिए समुप्पणणे,  
“एव खलु अहं विजयस्स खत्तियस्स पुव्वं इट्ठा वीमत्तिया अणुमया  
आसी । ज पभिइ च शां ममं इमे गम्भे कुच्छिमि गम्भत्ताए उववणणे  
त पभिइ च शां विजयस्स खत्तियस्स अहं अणिट्ठा अकता जाया  
यावि होत्था । न इच्छइ विजए खत्तिए मम नाम च गोयं च मि-  
गिहत्तए किमंग पुण दंसणं वा परिभोगं वा करित्तए । तं खयं खलु  
मम एयं गम्भं यहुहिं गम्भसाडणोहिं य पाडणोहिं य गालणोहिं य मारणो-  
हिं य साडित्तए वा” । एयं संपेहेइ २ ता वहाणि साराणि य षडुया-  
णि य निक्खणाणि य गम्भसाडणाणि खायमाणी पीयमाणी इच्छइ तं  
गम्भं साडित्तए । नो चेव शां मे गम्भं सडइ वा पडइ वा । तए शां सा  
मिया देवी जाहे नो संचाएइ तं गम्भं साडित्तए वा पाडित्तए वा ताहे  
संता तंता अधसवसा तं गम्भं दुंदुगं परिपहर ॥ ३१ ॥

तए शां सा मिया देवी नवण्हं माम्माणं बहुपांडुगणाणां  
 दारयं पयाया मे दाए जारंधये जाव भागिगभिसे । तए शां सा  
 मिया देवी तं दारगं अंधरुयं पाएइ २ सा भीया अम्मधारं सदावेइ  
 २ सा एयं ययासी, “गच्छ शां देवानुप्पिए ! तुमं एयं दारगं एकेते  
 उक्काडियाए उक्काहि” ॥ ३२ ॥

तए शां सा अम्मधारं मियाए देवीए ‘नह’ ति एयमट्टं पांड-  
 सुणोइ २ सा जेगोय विजए गतिए तेगोय उपागच्छइ २ सा एयं  
 ययासी, “एयं खलु मामी ! मिया देवी नवण्हं माम्माणं जाव भागिग-  
 मिसे जाव भीया भमं सदावेइ २ सा एयं ययासी गच्छ शां जाय उक्काहि  
 तं भंदिमह शां मामी ! तं दारगं अहं एगंते उक्कामि उक्काह मा ?” ॥ ३३ ॥

तए शां मे विजए गतिए नीनि अम्मधारंए अतिए एयमट्टं  
 सुया तहेय भीए भमाणे जेगोव मियादेवी तेगोव उपागच्छइ २ सा मियं  
 देवि एयं ययासी, “एयं शां देवानुप्पिए तुमं पढमे गम्भे । तं जर शां तुमं  
 एयं एकेते उक्काडियाए उक्कामि तयाशां तुमं पया नी यिरा भविस्सइ  
 तेगं तुमं एयं दारयं रहसियंसि भूमिघरंसि रहसिएशां भत्तपाणोशां  
 पांडिजागरमाणा २ विहराहि तेणं तुमं पया यिरा भविस्सइ ॥ ३४ ॥

तए शां सा मिया देवी विजयस्स गतियस्स ‘नह’ ति एय-  
 मट्टं विजाएशां पांडिसुणोइ २ सा तं दारगं रहसियंसि भूमिघरंसि रहसि-  
 एशां भत्तपाणोशां पांडिजागरमाणा २ विहरइ ॥

एयं खलु गोयमा ! मियापुत्ते दारए पुरा पुराणाणां असुभाणां  
 कम्माणां पावकलं पच्चणुभवमासो विहरइ ॥ ३५ ॥

“मियापुत्ते शां भंते ! दारए इशां चुए कालमाने कालं किशा  
 काहि गच्छिहि ? । काहि उचवज्जिहि ?

“गोयमा ! मियापुत्ते दारए बायोसे वाम्माइ परमा उयं वालइसा  
 कालमासे कालं किशा इहेव जंतुहावे दीवे भारहे याने वेयट्टगिरिपाय-

मूले मीहकुलंसि मीहत्ताप उचवज्जिहिइ । से शां तत्थ मीहे भवि-  
स्सइ अहम्मिप जाव माहसिए बहुपावं समज्जिणाइ । से कालमासे  
कालं किञ्चा हमीसे रयणाप्पभार पुढवीर उकासेणं सागरावमट्ठि-  
इयसु नेरइयसु उचवज्जिहिइ । से तथो अशांतरं उचट्ठिता सिरिसि-  
वेसु उपवज्जिहिइ । तथो अशांतरं से जाइ इमाइं जलयरपंचिदियति-  
रिक्खजंणियाणं मच्छकच्छमगाहामगरामारादीणां अद्धतेरम  
जाइकुल-योडिजोणियमुहसयसहस्साइं तत्थ एगमेगंसि जोणि-  
विहाणंमि अणेगसयसहस्सखुत्तो भुज्जो र तत्थेव पञ्चायाइस्सइ । से  
शां तथो अशांतरं उचट्ठिता एवं चउपपसु भुयपरीसप्पेसु खेयरेसु  
चउरिदियसु तेइदियसु येइदियसु वणाप्फइकडुयस्सवेसु कडुयदु-  
द्धियसु चाउतेउअउपुढवीसु अणेगसयसहस्सखुत्तो पञ्चाया-  
इस्सइ ॥३६॥

से शां तथो अशांतरं उचट्ठिता सुपइट्ठपुरे गाणां तार पञ्चाया-  
हिइ से शां तत्थ उम्मुक्कवालभावे अन्नया कयाइ पढमपाउसंसि-  
गंगार महाणाइर खलीणमट्ठियं खणमाणे तडप पडिय सत्ताणे काल-  
मासे काल किञ्चा तत्थेव सुपइट्ठपुरे नयरे सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताप  
पञ्चायाइस्सइ से शां तत्थ उम्मुक्कवालभावे जोज्वणगमणुपत्ते तहा-  
रूयाणं धेराणं अंतिर धम्म सोच्चा निसम्म मुंडे भविता आगाराअं  
अणुगारियं पव्वइए सामगणपरियागं पाउणिता आलोइयपडिक्कते  
समाहिपत्ते कालमासे कालं किञ्चा सोहम्मे कप्पे देवत्ताप उचवज्जि-  
हिइ । से शां तथो अशांतरं चयइ रत्ता महाविदेहे चासे सिञ्जिहिइ  
॥ ३७ ॥

एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव सम्पत्तेणं पढ-  
मस्स अज्जयणास्स अयमट्ठे पणुत्ते त्ति वेमि" ॥ ३८ ॥

(विवागमुत्तम पढमे मुयंयत्तथे पढमं अज्जयण)

## २. "उमभनिव्वाणं"

जे मे इमनाणं तणे मामे पंचमे पचमे माह्वजुले, तस्स णं माह-  
 वहुलमन तंरसापचमेण दसहिं अणगारसहस्सेहिं, संपरिखुडे अट्टा-  
 वयमेतमिहं मे चोदस्सेणं भत्तेणं अयाणरुणं संपलियं कनिसणणे  
 पुव्वण्हकालममयंसि अभिइणा नरुत्तेणं जोगमुवागपणं सुसम-  
 दुसमाय पगुणणउरुप पचमेहिं सेसेहिं उस्से अरहा वीदधंते जाय  
 सव्यदुक्खपहीणे ॥ १ ॥

जे समयं च णं उमभे अरहा कोमलिर फालगप वीदधंते, समु-  
 ज्जाए य द्विएणजाइ-जरा-भरण धंधणे सिद्धं बुद्धं जाय सव्यदुक्ख  
 पहीणे तं समयं च णं सकरस देविदस्स देधरणं, आसणे चालप ॥२॥

तए णं से सक्के देविदे देवराया आसणं चलयं पामइ २ ता  
 ओहिं पडेजइ २ ता भगवंते तित्थयरं ओहिणा आभोएइ २ ता एवं  
 घयासी, "परिणिबुए खलु जंबुद्दीवे दीवे भारो वामे उसहे अरहा  
 कोसलिय, नं जीयमेयं तीयपडुपणणमग्गायणं सकाणं देवि-  
 द्वाणं देवराईणं तित्थगराणं निआणमहिं करिअए । तं गच्छामि  
 णं अहंपि भगवओ तित्थगरस्स परिणिआणमहिं करेमि" ति  
 कट्टु चउगमीईए सामाणियसाहस्सीए तायत्तोसाय तायत्तीसर्पहिं  
 चउहिं जोगपालेहिं जाय चउहिं चउरासीहिं आयरखदेवसाह-  
 स्सीहिं अणणेहिं च वहुति सोहम्मकप्पवामीहिं वेमाणियहिं देवेहिं  
 देवाहिं च सद्धिं संपरिखुडे ताए ठक्किट्ठाए देवगईए जाय तिरिय-  
 मसंखेज्जाणं दीवसमुदाणं मज्झं मज्झेणं जेणोव अट्टावए पव्वए  
 भगवओ तित्थगरस्स मरीए तेणोव उवागच्छइ २ता विमणो निरा-  
 णोदे अंसुपुण्णायणं तित्थगरमरीयं तियखुत्तो आयाहिणं पया-  
 हिणं करेइ २ता नद्यासणो नाइदूरे सुस्सूममाणो पज्जुवामइ ॥३॥

तए शां ईसायो देविदे देवराया उत्तरद्वलोगाहियं अट्टायी-  
भविमाणसयमहस्माहियं मूलपाणी घनहयाहयो सुरिदे अयरंय-  
रवत्थयरे जहा सके नियगपरियारेणो सद्धि संपरियुडे उचागच्छर  
जाव पज्जुधामइ ॥४॥

तए शां मके देविदे देवराया ते बहये भयणावर-याणमंतर-जोहमि-  
धेमाणिण देवे पयं घयासी, "खिप्पामेव भां देवाणुप्पिया ! नंदणव-  
णाओ सरमाइ गोःसीसचंद्रणकट्टाई माहरह रत्ता तओ चिगाओ  
रएह—एगं भगवओ नित्यगरस्स, एगं गणाहराणं, एगं अवसेसाणं  
अणागाराणं । तयाणंतरं भां देवाणुप्पिया ! इहा मिग-उसम-तुरय-  
जाववणलताभत्तिचित्ताओ तओ सिधियाओ विउव्यह" ॥५॥

तए शां सके देविदे देवराया भगवओ नित्यगरस्स विणट्ट-  
जरा-मरुस्स सरीरगं सिधियाए आरुहेइ रत्ता चिगाए ठवेइ ॥

तए शां ते बहये देवा गणाहराणं अणागाराणं य सरीरगां  
सिधियाए आरुहंति रत्ता चिगाए ठवेंति ॥६॥

तए शां से सके देविदे देवराया अग्गिकुमारे देवे सदावेइ  
रत्ता पयं घयासी, "खिप्पामेव भां देवाणुप्पिया ! नित्यगरचिगाए  
गणाहर-अणागार-चिगाए य अगणिकायं विउव्यह" ॥

तए शां ते अग्गिकुमारा देवा अगणिकायं विउव्यंति ॥७॥

तए शां घाउकुमारा देवा घाउकायं विउव्यंति, अगणिकायं  
उज्जालेंति, नित्यगरसरीरगं गणाहरसरीरगां अणागारसरीरगां च  
भामेंति ॥८॥

तए शां ते देवा सव्वासु चिगासु अगक्तुक्कं घयं महं च  
माहरंति ॥

तप शं मेहकुमारा देवा ताभ्यां चिगाभ्यां स्त्रीरक्षणां निध्या-  
वेति ॥ ६ ॥

तप शं मे मङ्गे देविदे देवराया मगधभ्यो तित्थगरस्म उव-  
रिद्धं दाहिणं मफहं गिगहह, ईभाणे देविदे देवराया उवरिद्धं घामं  
मफहं गिगहह, चमरे असुरिदे असुरराया हेद्विद्धं दाहिणं मफहं  
गिगहह, बली चररोयसिदे चररोयसाराया हिद्विद्धं घामं मफहं  
गिगहह; अयमेसा मयणवह-जाय येमाशिया देवा जटारिहं अयमे-  
साई अंगमंगाई केह जिगभर्त्ताप, केह जीयमेयं सि फट्टु, केह घमं  
त्ति फट्टु गिगहंति ॥१०॥

तप शं से मङ्गे देविदे देवराया ते देवे पद्यं ययासी, "मिष्पा-  
मेव मां देवाणुपिया ! सध्वरयणामप महहमहालप तभ्यां चेहयधुभे  
करेह—एगं मगधभ्यो तित्थगरस्म चिगाप, एगं गगहचिगाप, एगं  
अयमेसाणं अणगाराणं चिगाप" ॥ ते देवा तहेच करेति ॥११॥

तप शं ते मध्ये देवा अट्टाहियं महिमं करेति २त्ता जेणोच  
साई २ विमाणाई जेणोव साई २ मवणाणि जेणोव भाभ्यो २ मभाभ्यो  
जेणोव मया २ माणवगचेहयधुभा तेणोव उयागच्छेति २त्ता चहराम-  
पसु गोलममुग्गपसु जिगभकहाभ्यां पखिधंति २त्ता अगेहि अरेहि  
महेहि च गवेहि अञ्जेति ॥१२॥

(जघृक्षिपगमी)

### ३. मेहे कुमारे

तेषां कालेषां तेषां समपरां चंपा नामं नयरी होत्या  
(वयशाओ) ॥ तीसे शां चंपाप नयरीय वहिया उत्तरपुत्रियमे दिस्सीमप  
इत्य शां पुण्यामहे नामं चेइए होत्या (वयशाओ) ॥ तत्य शां चंपाप  
नयरीय कोशि २ नामं राया होत्या (वयशाओ) ॥१॥

तेषां कालेषां तेषां समपरां समशास्त्र भगवभो महावीरस्स  
अंतवामी अजसुहम्मे नामं थरे जाइसंपरां यल-रुव-विशाय-शाशा-  
दंसरा-चरित-लाघव-संपरां ओ.यंसी तेयंसी वचंसी जभंसी जिय-  
कोहे जियमाणे जियमाणे जियलांहे जिइदिपे जियनिहे जियपरीसहे  
जायियासा-मंराभय-विष्णुके तवप्पहाणे शुशाप्पहाणे पवं करण-  
चरण-शिग्गाह-शिग्गय-अजव-मदय-लाघव-खंति-शुक्ति-मुत्त-विजा-  
मंत-वंभचेर-वेय-शाय-शियम-सच्च-सोय-शाशा-दंसरा-चरित-प्पहाणे  
ओराले घारे घोरव्वपे घोरवंभचेरवासी उच्छूढसरीरे संखित्त-विउल-  
तेयलेसे चउइसपुव्वी चउशाशावगणपंचहि अणगारसपहि सद्धि संप-  
रिवुडे पुव्वाणुपुव्वि चरमाणे गामाणुगामं दूइजमाणे सुहं सुहेशां विहर-  
माणे जेषां व चंपा नयरी जेषां व पुण्यामहे चेइए तेषामेव उवागच्छर  
रत्ता अहापडिरुवं उगहं उगिणहइ रत्ता संजमेण तवसा अप्पाशां  
भावेमाणे विहरइ ॥२॥

(तए शां चंपाप नयरीय परिसा निग्गया । कोशिओ निग्गओ ।  
धम्मं कहिओ । परिसा जामेव दिस्सि पाउब्भूया नामेव दिस्सि  
पडिगया ॥)

तेषां कालेषां तेषां समपरां अजसुहम्मस्स अणगारस्स जेहे  
तेव. अजजंबू नामं अणगारे कामवगोत्ते सत्तुस्सेहे अजसुह-



स्मस्म धेगस्म अदूरमाभंते उद्वृज्जाण् अहंस्मिन् भःसाकोदृष्टेयनद  
संजमोग नयसा अय्यासा मायैमाणे विहर ॥३॥

नग गा मे ज्वृ अगागारे जायस्मद्वे जाय संभर जाययं उद्वृ  
संजायनद्वे ३ उप्पगणामद्वे ३ उद्वे २सा जेणामंथ अज्जसुहम्म  
धेरे मेणामंथ उयागस्स २सा अज्जसुहम्मं धेरे निवसुत्तं आयाहिणं  
पयाहिणं करे २सा धेरे नमंम २सा अज्जसुहम्मस्स धेस्स  
नधामगसो नाइदूरे सुस्सममागे नमंममागे अभिमुहे पंत्तलिउडे  
विणपणा पड्डुयानमागे एयं वयामां, "जइ गं भंते ममणेयां भग-  
वया महार्येयां आर्येयां नित्येयां मयं संयुजेयां लोमणाहेया  
लंगपरिवेयां लोमपज्जेयरेयां अभयदएयां मरयादएयां अपग्गुदएयां  
मगदएयां धम्मदएयां धम्मवेमएयां धम्मपरचाउरंत्तचकवहिणा  
अप्पडिहय-वर-शाण-अंसगाधेरेया जिणेयां जानपयां युजेयां चोदएयां  
मुत्तेयां मीयणेयां तिणणेयां मारएयां नित्य-मयल-मदय-मगंत्त-भक्कय-  
मध्यावाह-मपुणारायसयं मामये टागासुवागएयां पंचमस्सयां अंगस्स  
अयमद्वे पयासात्ते, उद्वस्स गं अंगस्स भंते! नायाधम्मपहायां के अद्वे  
पयासात्ते?"

"एवं खलु जंबू ! ममणेयां भगवया महार्येयां उद्वस्स अंग-  
स्स दां सुयखंधा पयासात्ते जहा नायासा य धम्मकहायां य" ॥३॥

"जइ गं भंते! ममणेयां भगवया महार्येयां उद्वस्स अंगस्स  
दां सुयखंधा पयासात्ते पदमस्स गं भंते! सुयखंधस्स फइ अज्ज-  
यया पयासात्ते" ?

"एवं खलु जंबू ! ममणेयां भगवया महार्येयां नायायां पंगु-  
याधीसें अज्जकयणा पयासात्ते जहा उन्निवसणाए संघाडे २ अंहे ३  
कुम्भे ४ यं सेलगे १ । सुवेह य रोहिणी ७ मल्लीप माहंदी ६ खंदमहि १०

य ॥१॥ दाघहवे११ उदगगाप१२ मंडुके१३ तेयली१४ वि य । नंदि-  
फले१५ अमरकंका१६ आइएगो१७ संसुमार्हि१८ य ॥२॥ अघरे ये पुंड-  
री२९ गाप एगुशाभीमिमे" ॥ २३ ॥ ५॥

"जइ शां भंते ! समशोगं भगवया महावीरेणं नायागं एगुशवीसं  
अउभयशा पयशाता पढमस्त शां भंते अउभयशास्स के अट्टे  
पयशात्ते" ? एवं खलु जंवू ! तेषां फालेणं तेषां समपशां इहेव जंबुहीवे  
दीवे भारहे दासे दाहिणाइडभरहे रायगिहे नामं नयरे होत्था  
(वयशाअं) गुणसिलप चेइए (वयशाअं) ॥ तत्थ शां रायगिहे नयरे  
सेणिय नामं राया होत्था (वयशाअं) ॥ तस्स शां सेणियस्स रएणो  
नंदा नामं देवी हांत्था (वयशाअं) ॥ तस्स शां सेणियस्स रएणो पुत्त  
नंदाए देवीए अत्तए अभए नामं कुमारे होत्थां अहीणा जायमरूवे ।  
सेणियस्स रएणो सव्वकज्जेसु लद्धपच्चए, तस्स रज्जं च रट्ठं च  
फोसं च कौट्टामारं च बलं च दाहणं च पुरं च अंतेउरं च सयमेव  
समुपेक्खमाणो विहरइ ॥६॥

तए शां तस्स सेणियस्स रएणो धारिणां नामं देवी होत्था ॥  
सा धारिणां देवी अएणया कयाइं पुट्टवरतायर ठकालसमयंसि सय-  
णिज्जंसि सुतजागरा अंहीरमाणी २ ५मं महं सत्तुस्सेहं रययकूड-  
संणिएहं नहयलंसि सोमागारं लीलायंतं जंभायंतं गयं मुहमंतिगयं  
पासिताणं पडिबुद्धा । हट्ठतुट्ठा समाणी तं सुमिणं उग्गिएहइ २ ता  
सयणिजाअं उट्टेइ २ ता अतुरियमचबलं रायहंससरिसीए गर्हए  
जेणामेव सेणिय राया तेणामेव उवागरुद्धइ २ ता सेणियं रायं  
इट्ठाहिं कंनार्हिं पियार्हिं गिरार्हिं पडियंहेइ २ ता सेणियं रएण  
अम्मएणुणाया समाणी नाणामणिरयणचिचंसि भदासणंसि  
निसीयइ २ ता आसत्था वीसत्था मत्थए अंजलिं कट्टु एवं चयासीं,  
"एवं खलु अहं देवाणुप्पिया ! अज्ज तंसि तारिसगंमि सयणिज्जंसि

सुप्तजागरा नियमवयसमइययंतं गयं सुमिणे पामिना पडिदुद्धा ॥  
तं पयसस गं सुमिणरस देवाणुपिया ! के. क. तन्मिसे भविरसह ? ॥७॥

तप गं से मेणर राया धारिणीर देवीर अतिव पयमहं  
सं.धा निमम्म हट्टतुट्टे समाणे तं सुमिणं उमिणहह २ ता इहं  
अणुपविमह अप्पणो साभाद्विरां महपुच्चपणं बुद्धिविगणणोणं  
नस्स सुमिणस्स अर्थे.गहं व.रेइ २ ता धारिणिं देवि अणुचूहंमाणे  
एवं वयासी, "अ.साले ग तुमे देवाणुपिय ! सुमिणे दिट्टे । कल्लाणे  
गं तुमे देवाणुपिय ! सुमिणं दिट्टे । अत्तलामो देवाणुपिय पुत्तलामो  
देवाणुपिय ! सुप्पलामो देवाणुपिय ! एवं खलु नअहं मासाणं  
वहुपडिपुण्णाणं अद्धट्टमाणं राइंदियाणं विरकंताणं अमहं कुल-  
केउं कुलअडंसयं दारयं पयाहिमि । से वि य गं दारय उन्मुक्कयाल-  
भावे सूरे पारे राया भविस्मद । तं आरे.ग-तुट्टि-दीहाउ-क.ल्लाण-  
करणं तुमे देवी ! सुमिणं दिट्टे" ति कट्टु भुज्जो २ अणुवूहेइ ॥८॥

तप गं सा धारिणी देवी मेणिएणं रणणा एवं धुता समाणे  
हट्टतुट्टा सयंसि सयणिजंसि निमीयइ २ ता एवं वयासी "मा मेये  
उत्तमे पहाणे मंगले सुमिणे अण्णेहि पावसुमिणेहि पडिहम्मिहिइ"  
ति कट्टु देवगुरुजणसंयद्धाहि पमत्थाहि धम्मयाहि, कहाहि सुमि-  
णजागरियं पडिजागरमाणी विहरइ ॥९॥

तप गं से मेणिए राया पच्चूसकालसमयंसि विहियसत्थ-  
कुमले सुमिणपादप सहावेइ २ ता धारिणीण देवीप दिट्टठस्स सुमि-  
णस्स फलं पुच्छइ ॥१०॥

एवं पुच्छिया समाणा ते सुमिणपादगा सुमिणमत्थाइं उवा-  
रेमाण एवं वयासी, "एवं खलु सामी ! अमहं सुमिणसत्थंसि पाया-  
लीसं सुमिणा तीसं महासुमिणा वावत्तारिं सव्वसुमिणा दिट्टा । तत्थ  
गं सामी ! अरहंनमायरो वा चक्रवट्टिमायरो वा अरहंनंसि वा चक्र-

पट्टिसि वा गम्भं वक्रमाणंसि एषसि नीसाए महा सुमिणाणं इमे  
 चउदहस महासुमिणे पानिताणं पडिवुज्झंति ते जहा गय-चसह-  
 र्माहं अभिसेयदाम-नसि-दिशयरं उभयं कुभं । पउममर-सागर-दि-  
 माण-भन्नण-रुरुणुशयं सिहिं च ॥१॥ तथेणं सामी ! मंडलियमायरो  
 मंडलियंसि गम्भं वक्रमाणंसि एषसि चउदसगहं महासुमिणाणं  
 अणणयरं एगं महा-सुमिणं पानिताणं पडिवुज्झंति । ते अंरालेणं  
 सामी ! धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे । एवं खलु सामी ! नवगहं  
 मामाणं बहुपडिपुगणणा धारिणी देवी एगं दारयं पयाहिइ से वि  
 य दारए रउज्जघई राया भविस्सइ, अणणारे वा भावियप्पा" ॥ ११ ॥

तएणं तामे धारिणीए देवीए दोसु मामंसु विइकंतसु तइए  
 मासे वट्टमाणे तस्म गम्भस्स दोहलकालसमयंसि अयमेयारूवे  
 अकालमेहेसु दोहले पाउब्भवित्था; "धगणाअं ताअं अम्मयाअं,  
 पुगणाअं ताअं अम्मयाअं, जाअं गं मेहेसु अब्भुग्गएसु हत्थि-  
 एएणं दुरुडाअं सच्चअं ममंता आहिंडमाणीअं डोहलं विण्णंति, ते  
 णं अहमपि मेहेसु अब्भुग्गएसु जाव डोहलं विण्णेमि" ॥ १२ ॥

तएणं सा धारिणी देवी तंसि दोहलंसि अविण्णिज्जमाणंसि  
 असंपत्तदोहला अणंपुगणदोहला सुक्का भुक्खा निम्मंसा दुव्यजा  
 जाया ॥ १३ ॥

तएण धारिणीए देवीए अंगपडियारियाअं अग्भिंतरियाअं  
 दामचेडियाअं जेणं मेणिए राया तेणेव उवागच्छंति २ ता एवं  
 वयासी, "एवं खलु सामी ! किं पि अज्ज धारिणी देवी सुक्का भुक्खा  
 अट्टभाणोचमया भियायइ" ॥ १४ ॥

तएणं मे मेणिए राया जेणेव धारिणी देवी तेणेव उवागच्छइ  
 २ ता तं एवं वयासी "किंणु तुमे देवाणुप्पिए ! अट्टभाणोचमया  
 भियायसि ?"

तए शं सा धारिणी देवी पथं ययासी, "पथं खलु मयासी ! मम  
अयमेयारुधे अकालमेहेसु दोहले पाउम्भूर" ॥ १५ ॥

तए शं से सेणिए रायः से धारिणी देवि पथं ययासी "मा एं तुमं  
देवाणु पिय ! अट्टभाणं भियाहि, अहं ए तहा करिसामि जहा शं तउ  
अयमेयारुधे अकालदं हलस्म मणोरहसंपत्ती मदिस्सइ" ॥ १६ ॥

तए शं से सेणिए राया अमथं नामं कुमारं सदावेर २ सा पथं  
ययासी "पथं खलु पुता ! तय चुल्लमाउयाप धारिणीप देवीप अकाल-  
मेहेसु दोहले पाउम्भूर। तस्म दोहलस्म अहं उवापहि उप्पत्ति अदि-  
दमाणे आहयमणभयप्पे भियामि" ॥ १७ ॥

तए शं से अमप कुमारे सेणियं रायं पथं ययासी, "मा एं तुमं  
ताओ ! पथं भियाह । अहं शं तहा करिसामि जहा मम चुल्लमाउ-  
याप धारिणीप देवीप अकालदोहलस्म मणोरहसंपत्ती मदि-  
स्सइ" ॥ १८ ॥

तए शं तस्स अमयकुमारस्म अयमेयारुधे मणमेकप्पे समुप्प-  
ज्जित्था, "एणं खलु सका माणुस्सपणां उवापणां मम चुल्लमाउयाप धारि-  
णीप देवीप अकालदोहलस्म मणोरहसंपत्ति करित्तप नत्तय दिव्येणं  
उवापणां । अत्थि शं मम मोम्मफप्पयासी पुव्वसंगइय देवे महद्धिइय  
य महासुफणे । ते सेयं खलु ममं पोसहत्तालाय पोसहियस्स वंमया-  
रिस्स एगस्स अयीयस्स दम्मसंधारोत्थगयस्स अट्टममत्तं परिगिण्हसा  
पुव्वसंगतिर्यं देवं मणसीकरेमाणस्स विहरित्तप । तए शं पुव्वसंगइय देवे  
मम चुल्लमाउयाप धारिणीप देवीप अकालमेहेसु दोहलं विणेहिइ" ॥

पथं संपेहेर २ सा उधारयासवळभूमि  
पडिलेहेर २ सा पव्व-

तप शां से पुष्वसंगतिप देये अभयारम' कुमारस्स अंमिप पाउ  
भूप । अभपशां कुमारेणं अम्मद्विय भमाणे अफालमेहे विउव्यइ ॥२०॥

तप शां सा धारिणी देवी अफालमेहेसु दोहले सम्मं विणेइ २  
सा नवणहं मामाशां पाडिपुगणाशां मेहं नामं दारयं पयाया ।

तप शां तस्स मेहस्स कुमारस्स अम्मापियरो अशापुव्येणं नाम-  
करणं च पजेमशां च पचंचकमाशां च चांलांपणयं च महया २  
इइदाप करिमु ॥ २१ ॥

तप शां तं मेहं कुमारं तस्स अम्मापियरो गम्भट्टमे यासे सोह-  
शांसि निहि-करण-मुहुत्तंनि फलायरियस्स उचयैति । तप शां से  
फलायरिप मेहं कुमारं लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ वायत्ति  
फलाओ सुत्तओ अत्यओ करणओ य निक्खायेइ, तं जहा, जेहं १  
गणियं २ न्वं ३ शाट्टं ४ गीयं ५ वाइयं ६ सरणयं ७ पांक्खरणयं ८  
समतालं ९ जूयं १० जणवायं ११ पाढयं १२ अट्ठावयं १३ पारेकत्तं  
१४ दगमट्टियं १५ अणणाविहिं १६ पाणाविहिं १७ घत्थविहिं १८ विले-  
दणाविहिं १९ सयणाविहिं २० अजं २१ पहेलियं २२ मागहियं २३  
इत्थियलक्खणं २४ गाहं २५ गीइयं २६ सिलोयं २७ हिरण्णजुत्ति  
२८ सुवण्णजुत्ति २९ चुगणाजुत्ति ३० आभरणविहिं ३१ तरुणी-  
पडिकम्मं ३२ पुरिसलक्खणं ३३ हयलक्खणं ३४ गयलक्खणं ३५  
गोणालक्खणं ३६ कुक्कुडलक्खणं ३७ छत्तलक्खणं ३८ दंडलक्खणं  
३९ अस्तिलक्खणं ४० मणिलक्खणं ४१ कागणिलक्खणं ४२ वत्थु-  
विजं ४३ संधारमाणां ४४ नगरमाणां ४५ वूहं ४६ पडिवूहं ४७ चारं  
४८ पडिचारं ४९ चक्रवूहं ५० गटलवूहं ५१ सगडवूहं ५२ जुद्धं ५३  
गिजुद्धं ५४ जुद्धाजुद्धं ५५ अट्टिजुद्धं ५६ मुट्टिजुद्धं ५७ पाडुजुद्धं  
५८ लयाजुद्धं ५९ ईसत्थं ६० कुरूपचायं ६१ धणुव्येयं ६२ हिरण्ण-

पागं ६३ सुवगणपागं ६४ सुत्तमेडं ६५ घट्टमेडं ६६ ग्गालियाखेडं ६७  
पत्तच्छेजं ६७ कडगच्छेजं ६९ मत्तीवं ७० निज्जीवं ७१ सउत्तख्यं ७२॥

तए ग्गं से फलायरिय मेहं कुमारं एत्ताओ फलाअं। सिक्क्याविता  
अम्मापिड्ढण अंतिप उवणेइ ॥ २२ ॥

तए ग्गं तस्स मेहस्स अम्मापियरो नं फलायरिये महुरेहिं वय-  
याहिं विपुत्तेण भवमल्लालंकारेणं मकारंति २ ताधिउले जावियारिहं  
पीइदाणं दलयंति २ ता पडिदिमज्जंति ॥

तए ग्गं से मेहे कुमारं चावत्तरिकजापंडिय एवंगसुत्तपडियं हिर  
अट्टारस्सविहिप्पगारंदेसीभापाविमारर जार ॥ २३ ॥

तए ग्गं तस्स मेहस्स कुमारस्स अम्मापियरो सं.हसं स तिहि-  
करण-मुहुत्तंनि मेहे कुमारं सरिस्सेहितो रायकुलेहितं आ शिद्धियाहिं  
अट्टहिं रायवरकगणाहिं सद्धि पाणि गिगहत्वेमु ॥ २४ ॥

तए ग्गं से मेहे कुमारे उप्पिपासायवरग र फुट्टमाणेहिं मुहंगमत्थ-  
एहिं धरतस्सोसंपउत्तेहिं वत्तीमदवद्धएहिं नाडएहिं उचगिज्जमाणे  
२ उवलालिज्जमाणे २ विउले कामभोए पच्चगुभवमाणे विहरइ ॥२५॥

तेणं कालेणं तेणं समयणं समणे भगवं महावीरं पुब्बाणुपुब्बिं  
चरमाणे गामाणुगामं इइज्जमाणे सुहे सुहेण विहरमाणे जेणामेव  
गायगिहे नयरे गुणसिलए चेइए,तेणामेव उवागच्छइ जाव विहरइ ॥२६॥

तए ग्गं से मेहे कुमारे फंत्तुइज्जपुरिसस्स अतिर सत्तणस्स भग-  
वओ महावीरस्स आगमणपवित्ति सोचां निसम्म हट्टतुट्टं फंत्तु-  
वियपुरिसं सदावेइ २ ता पवं घयासी, "खिप्पामेव भं देवाणुप्पिया!  
आउधंठं आसरहं जुत्तमेत्थ उवट्टवेह" ॥ २७ ॥

तए शा से मेहे कुमारे चाउधंटे आसरहं दुरुठे समाणे जेणामेव  
समणे भगवं महावीरे तेणामेव उवागच्छइ जाव दिणायणं पज्जुवा-  
सइ ॥ तए शा समणे भगवं महावीरे मेहस्स कुमारस्स तीसे य मह-  
इमहालियाए परिभाए विचिच्छं धम्ममाइएवइ ॥ २८ ॥

तए शां से मेहे कुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अतिए  
धम्मं सं.ञ्चा णिसम्म हट्टतुठे जेणामेव अग्मापियरो तेणामेव उवा-  
गच्छइ २ ९। अग्मापिउणा पाददइणं एरेइ २ सा एवं वयामी, “एवं  
एलु अम्मयाओ ! तए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिय धम्मे  
निसंते से विअणं धम्मे इच्छइ पांडच्छइ अभिरुए । तं इच्छामि शां  
अमयाओ ! तुम्हेहि अग्गणुणणाए समाणे समणस्स भगवओ महा-  
वीरस्स अंतिय भुंडे भविताणं आगाए, ओ अग्गणारियं पच्चइत्तए” ॥ २९ ॥

तए शां सा धारिणां देवी तमणिट्ठं अकंतं अप्पियं फरुसं गिरं  
सोच्चा तप्पमाणी सं.यमाणी विलवमाणी मेहं कुमारं एवं वयासी  
“तुमं सि जाया ! अग्गं एगे पुत्ते इट्ठे कंते पिए ॥ नो खलु जाया !  
अग्गे इच्छामो उणमवि विप्पओगं सहित्तए । भुंजाहि ताव जाया !  
माणुस्सए भोगे जाव एयं जीवामो । तओ पच्छा अग्गेहि कालग-  
एहि परिणयएव निरवयएव्ये परिअइस्ससि” ॥ ३० ॥

तए शां से मेहे कुमारे अग्मापिऊहि एवं वुत्ते समाणे एवं वयामी,  
“तहेव शां तं अग्गो ! जहेव शा तुम्हे ममं वयह । एवं खलु अम्मयाओ !  
माणुस्सए भवे अणुधं अणियए असासए दमणसय-उवइवामिभूए  
जिज्जुलवाधंचले अणिये जलविंदुले लचवले कुसग्गजलविंदु-  
सन्निभे संभअरागसरिसे सुविणइंसणो, वमे पच्छा पुरं च अवरसं  
विप्यजइणजे । सं के शां जाणइ अम्मयाओ ! के पुंवि गमणाए के  
पच्छा गमणाए, तं इच्छामि शां जाव पच्चइत्तए” ॥ ३१ ॥



तए शं तस्म मेहस्म कुमारस्म अम्मापियरो जाहे शो मंचा-  
 पंति मेहे कुमारं पाहं विमयाणुलोमाहि आघयणाहि य पगगा-  
 शाहि आघयि तए वा पगगाधिरए वा ताहे विमयपिण्डुलाहि संजम-  
 भउच्चेगकारियाहि य एणवणाहि एगणापेमाणा एवं घयासी,  
 "रस शं जाया ! शिभंघं पाज्यगो मधे, अणुकरे, फेवालिय. पटिपु-  
 यणो. संसुद्धे, सद्गगणो. मिद्धिमणे, मुत्तिमणे, मधदुपण्णहं. शं  
 मगं. अहीय एगन्तद्विट्टण, गुरो इय एमंतधारण, लं. ह्रमया इय  
 जया चावेयया, यासुयाकवलां इय नीम्मण, गंगा इय पडिस. यगमगा-  
 याप, महा म्मुहो इय भुयाहि दुत्तरे, अमिधारा य मंचरियधं । शो  
 खलु कप्पइ जाया ! रुद. गणां नि. संघां आदाक. निमए वा उर-  
 मिएवा, कीय-गटे वा, टधिरवा, रइए वा बुम्भिकलमत्ते वा, चदलिया-  
 भत्ते, वा पंताग्मत्ते वा, गिलाणभत्ते वा. मूलभोयणे वा, कंदभो-  
 यणे वा, फलभोयणे वा, बीयभोयणे वा. हरियभोयणे वा भो तए  
 वा पायए वा ॥ तुमे चणो जाया ! मुहम्मनुचिए शो चेष शो दुहम्मनु-  
 चिए शालं मीयं शालं उणहं शालं गुरुहं शालं पिवासं शालं वाइय-  
 पित्थिय-मंणियाइय-विधिहे रोगायंके उच्चावए गामकंटके वाधीम  
 परीसहं. घमगो उदियणे सम्मं अहियासितए ॥ तं भुंजाहि ताव  
 जाया ! जाव परिचइस्समि ॥ ३२ ॥

तए शं से मेहे कुमारे अम्मापिऊहि एवं घुत्ते समाणे अम्मा-  
 पियरो एवं घयासी "तहेव शं तं अम्मयाओ । जहेव शं तुम्भे ममं  
 ययह ॥ सधं खलु निभंघे पाचयणे कियिणाणं कायरणं कापुरि-  
 साणं इहलंगपडिधद्धाणं परले. गनिप्पिवासाणं दुरणुचरे पायव-  
 जणास्म । शो चेष शं धीरस्स एव किं धि दुकरं करणायाए ॥ तं  
 इच्छामि जाव पव्वइ तए ॥ ३३ ॥

तए शं तस्म मेहस्स कुमारस्स अम्मापियरो तं एवं घयासी  
 "इच्छामो ताव जाया ! एगदिवसमधि तव रायसिदिं पासितए ॥"

1. Supply the rest from § 30.

तए शां से मेहे कुमारे तुस्तिशीए संचिद्धइ ॥ ३४ ॥

तए शां से सेशिअ राया कोडुंयियपुरिसे, सदावेइ २४ पं  
 वयासी, “खिप्पामेव भां देवाणुप्पिया ! मेहरस्स कुमारस्स महत्थं  
 महारिहं महग्घं विडलं रायाभिसेव उचट्ठवेइ” ॥ तए शां ते कोडुंयि-  
 यपुरिस्सा तहेव उचट्ठवेति ॥ ३५ ॥

तए शां से सेशिअ राया दह्हिं गणायगेहि दंडणायगेहि  
 भंपरियुडे मेहं कुमारं अट्ठसयाणं सोवणियाणं कलसाणं जलेहि  
 रायाभिसे, शां अभिनिचमाणे पं वयासी “जय २ शांदा ! जय २  
 मदा ! मद्दं ते; अजियं जिणाहिं, जियं पालयाहिं, जियमज्जे घमाहिं”  
 इति कट्ठु जयसहं पउं जइ ॥

तए शां से मेहे राया जाइ ॥ ३६ ॥

तए शां तस्स मेहस्स रायां अम्मपियरो पं वयासी “भण  
 जाया ! किं ते दलयामो किं ते पयच्छामो ?”

तए शां से मेहे राया अम्मपियरो पं वयासी इच्छामि शां  
 अम्मयाअं ! कुत्तियावणाअं रयहरणं पाडिग्गहं च आणियं काम-  
 वयं च सदावितए” ॥ ३७ ॥

तए शां से सेशिअ राया कोडुंयियपुरिस्सा सदावेइ २ ४ पं  
 वयासी “गच्छह शां तुम्हे देवाणुप्पिया ! स्तिरिघराअो तियिणसय-  
 महस्साहं गहाय दोहिं सयसहस्सेहिं कुत्तियावणाअं रयहरणं पाडि-  
 ग्गहं च उदयेइ, पगेणं मयस्सहस्सेणं कामवयं सदावेइ” ॥

तए शां ते कोडुंयियपुरिस्सा तहेव करेति ॥ ३८ ॥

तए शां से कामवे सेणियं रायं करयलमंजलि कट्ठु पं  
 वयासी, “संदिमह शां देवाणुप्पिया ! जं मए कराणिज्जं” ॥

तए शा मे संशिर राया कामदयं एवं दयामी, "गरुड्वाहि शं  
तुमं देवागुपिया ! सुरभिणा गंधेदपशां तिके हरथपाए परखांटेहि ।  
सेयाए चउप.लाए पोत्तीए मुई बंधिता मेहकुमारस्स चउरंगुल-  
चजे निक्खमशापाउभे केमं कप्पाहि" ॥

तए शां मे यामवे तहेय पेमे कप्पइ ॥ ३६ ॥

तए शां मेइकुमारस्स माया महारिहेण हंसलक्खणा-पड-  
माडएण अग्गकेमे पडिच्छइ २ ता सुरभिणा गंधे.दपशां पक्खालेइ  
२ ता भरमेण गोमीसचंदणेण चच्चाथं दलयइ २ ता सेयाए  
पोत्तीए यधंइ २ ता रयणासमुग्गयंसि पक्खियइ ॥ वारिधारा-हि-  
एणमुत्तावलपगामाई अमूई विणिग्गुयमाणी २ रे.यमाणी २  
कंदमाणी २ एवं दयामी, "यस्स शां अहं, मेहकुमारस्स अब्भुदपसु  
य उस्सवेसु य अपच्छिमे दरिस्सणे भविहिइ" ति कट्टु उस्सीसामूले  
एवेइ ॥ ४० ॥

तए शां तस्स मेहस्स कुमारस्स अग्गापियरे उत्तरायइ.माणी  
सुहासणां.न्यायेति, मेहं.कुमारं दंशं पि तच्च पि सेयापीयपंहि  
फलसेहि गदायेति २ ता पम्हलखुकुमालोए गंधकासाइयाए स्वाडि-  
याए गायाइं लुठेति. २ ता भरमेण गो मीसचंदणेण गायाइं अणु-  
लिपति. २ ता शासा-शासस्स-वाय-जोजं हंसलक्खणासाडगं शिथं  
मेति हारं पिण्डंति अद्धहारं पिण्डंति एवं एगावलि मुत्तावलि  
कणगावलि रयणावलि जाय दिव्यं सुमणदामं पिण्डंति ॥४१॥

तए शां मेहं कुमारं गीटिम वेडिम-पुरिम-संजे.इमेण चउविय-  
हेयां महुरां कप्पक्खं पिय अलकियमरीरं करेति ॥ ४२ ॥

तए शां मे संशिर राया कोट्टुवियपुरिसे महावेइ २ ता एवं  
दयामी "विप्पामेध भो देवागुपिया ! अशेगखंभस्यसंशिविदुं  
पुरिस्सहस्सवाहिणि मीयं उयइउवेइ ॥

तत्र शं ते कोटुंबियपुरिस्त्वा नीगं उच्यते ॥४३॥

तत्र शं मेहे कुमारे सीयं दुरुदह २ चा सीहासखावरणाप पुर-  
न्याभिमुहे निसीय ॥४४॥

तत्र शं तस्स मेहस्स कुमारस्स माया एहाया कयवज्जिक्कमा  
अप्पमहग्घाभरणांकियस्सरीरा सीथे दुरुदह २त्ता मेहस्स कुमारस्स  
वाहिणपासे सीहासखंस्ति निसीय ॥४५॥

तत्र शं तस्स मेहस्स कुमारस्स पिया कोटुंबियपुरिसे सदा-  
वेह २त्ता एयं घयासी, "विप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! सरिस्साणं  
सरिस्सत्तयाणं सरिम्भयथाणं कोटुंबियवरतरणाणं सहस्सस्सं  
महावेह" ॥

तत्र शं ते कोटुंबियवरतरणा सदाविया समाणा सेखियं  
रायं एयं घयासी, "संदिसह शं देवाणुप्पिया ! जराणं अम्हेहिं कर-  
णिज्जं" ॥

तत्र शं से सेणिए राया ते कोटुंबियवरतरणे एयं घयासी,  
"गच्छह शं देवाणुप्पिया ! मेहस्स कुमारस्स पुरिस्सहस्सवाहणिं  
सीयं परिवहह" ॥ ते तहेव परिवहंति ॥४६॥

तत्र शं तस्स मेहस्स कुमारस्सा तं सीयं दुरुदस्स समाणस्स  
इमे अट्टट्टमंगलया तप्पट्टमयाप पुरधो अहाणुपुच्चीए संपट्टिया, तं  
जहा, सोत्थिय-सिरिवच्छ-शांदावत-यद्दमाणग-भहासणा-कलस-  
मच्छ-दप्पणा ॥

तत्र शं पहये अत्थत्थिया त्तिहिं इहाहिं फंताहिं गिराहि अणवरयं  
अभिधुणंता एयं घयासी "जव २ नंदा, जय २ भहा" ॥४७॥

तत्र शं तस्स मेहस्स कुमारस्स अम्मापियरो मेहं कुमारे पुरधो  
कट्टु जेणामेव समणे भगंथं महायारे तेणामेव उचगच्छंति २ चा  
निश्चुत्तो आयादिसं पयादिसं करेति पंदंति नर्मसंतिरत्ता एयं घयासी,  
"एस शं देवा अम्ह एणे पुत्ते इहे कंते पिय ॥ स जहह

नामप उप्पले इवा पउमे इवा कुमुदे इवा वंके जाप जणेसु संय-इदप  
 नो वलिप्पइ पंकरपणं, पवामेय मेहे कुमारे कामेसु जाप भोगेसु संय-  
 इदप नो वलिप्पइ भोगरपणं । एम शं देयाणुप्पिया ! संमार-भउ-  
 च्चिग्गे, भीए जम्मजराभरणाणं, इच्छइ देयाणुप्पियाणं अंनिप मुंठे  
 मविचा आगाराओ अण्णारियं पवइसप । तं अग्गे देयाणुप्पियाणं  
 मिस्सभिवरं वल्लयामां, पडिच्छंणु शं देयाणुप्पिया मिस्सभिवरं" ॥४८॥

तए शं समणे भगवं महावीरि मेहकुमारस्स अम्मापिऊहि एवं  
 बुत्ते समायो एवमद्वं समं पडिसुणइ ॥४९॥

तए शं मे मेहे कुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंति-  
 याओ उत्तरपुरतियं दिग्निभागं अयकमेइ २ ता सयमेव, आभर-  
 णमल्लालंकारं सुयइ ॥५०॥

तए शं मेहकुमारस्स माया हेसल म्मरणेणं पडिसाडएणं आभ-  
 रणमल्लालंकारं पडिच्छइ २ ता अम्मूणि विणिम्भुयमाणी संयमारणी  
 एवं पयासी, "जइयव्यं जाया ! घडियव्यं जाया ! अस्सि च शं अट्ठे  
 शो पमापच्चं । अग्गे पि एवमेव मग्गे भवउ", त्ति कट्टु मेहकुमारस्स  
 अम्मापियरो समणं भगवं महावीर वंदंति नमंसंति २ ता जामेव  
 दिस्सि पाउंभूया तामेव दिस्सि पडिगया ॥५१॥

तए शं से मेहे कुमारे पंचमुट्ठियं लोयं करेइ २ ता जेणामेव  
 समणे भगवं महावीरि तेणामेव उवागच्छइ २ ता एवं पयासी, "आ-  
 लिसे शं भंते ! लोए जराए मरुण्ण य ॥ से जहा नामए केइ गाहा-  
 यरं आगारंसि क्रियायमाणंसि जे तत्थ भंडे अप्पभारे मोह्णगुरुए तं  
 गहाय आयाए एगंतं अयकमेइ, 'एस मे णिच्छारिए समणे पच्छा  
 पुरा य लोए हियाए सुहाए मयिस्सइ' । एवा मेव मम वि एगे आयाए-  
 भंडे इट्ठे कंते पिए । एस मे निच्छारिए समणे संमारवोच्छेयकरे  
 मयिस्सइ तं इच्छामि शं देयाणुप्पियहि सयमेव पव्वाविउं, सयमेव

सिद्धाविडं, सयमेव आचार-गे.यर-विणय-धेणइय-चरण-करण-  
जायामायाडत्तियं धम्मं आइफियडं" ॥५२॥

तए शं समणे भगवं महावीरे मेहे कुमारे सयमेव पव्यावेइ, सय-  
मेव जाव धम्ममाइफखइ, "एवं देवाणुप्पिया ! गतंय्वं, एयं चिट्ठियच्चं,  
एयं निसीयच्चं, तयट्ठियच्चं, भुंजियच्चं, मात्तियच्चं" ॥५३॥

जं दिवमं च शं मेहे कुमारे आगाराओ अणगारियं पव्वइए,  
तस्स शं दिवसस्स पुव्वारयइकालसमयंसि समणाणां निग्गंथाणं  
जहारिइ सेज्जासंथारगेसु विभज्जमाणेसु मेहस्स कुमारस्स दारमूले  
सेज्जासंथारए जाए ॥५४॥

तए शं समणा निग्गंथा पुव्वरत्तावरतकालसमयंसि घायणाए  
य पुच्छणा ए उच्चारस्स य पासवणास्स अइगच्छमाणा य निग्ग-  
च्छमाणा य अप्पेगइया मेहं कुमारे इत्येसुं संघट्ठंति एवं पापसुं  
सीसे शं पोट्टे शं फायंसि । एवं महालियं च तं रयणि मेहे कुमारे शो  
संचारइ खणमवि अच्चि खिमीलित्तए ॥५५॥

तए शं तए मेहस्स कुमारस्स अयमेयारूवे अज्जत्थिए  
समुप्पज्जित्था, "एव खलु अहं सेणियस्स रयणो पुत्ते, धारिणीए  
देवीए अतए, मेहे कुमारे । तं जया शं अहं आगारमज्जे वसामि तथा  
शं ममं ममणा निग्गंथा आढायंति सक्कारेति । जं पभिइ च शं अहं  
अणगारियं पव्वइए तं पभिइ च ममं समणा निग्गंथा शो आढायंति  
शो सक्कारेति अदुत्तरं च शं समणा निग्गंथा पुव्वरत्तावरत्ता<sup>१</sup> जाव  
ममं संघट्ठंति एो संचारमि खणमवि अच्चि निमीलित्तए तं सेयं  
खलु मम कल्ल पाउप्पमाण रयणीए समणं भगवं महावीरं आपुच्छत्ता  
पुणरवि आगारमज्जे वसित्तए," त्ति कट्टु एवं संपेहेइ २ ता अट्ट-  
हुहट्ट-वसट्ट-माणासगए शिएत्यपट्ठिरुवियं च तं रयणि खवेइ २ ता

कालं पाउप्पभाए रथणीए जेणाभेए समणे भगवे महावीरे तेणाभेए  
उवागच्छइ जाव पज्जुयामइ ॥५६॥

तए शं 'मेहा' इ समणे भगवे महावीरे मेहं कुमारं पथं ययासी  
"से शृणुं तुमं पुण्यावरतकालसमयंसि समणेहि निग्गंथेहि धायणाए  
य पुच्छणाए जाव १ आगार मज्जे वसित्तए ॥ शृणुं पेसहे समंहे ?"

"हंता ! अहे समंहे"

"एवं खलु मेहा ! तुमं इथां तथं भवे वेयइडनिरिपायमूले  
हत्थिराया होत्था ।

तथं शं तुमं अगणया कयाइं गिरहाकालसमयंसि जेहा-  
मूलमासे दग्गइवजातापनित्तंसु यणंतेसु घूमाउलासु दिसासु मंड-  
लवाए व्व परिष्मंते तथे संजायभए वद्धिं हत्थीहिं संपरियुटे  
दिसं.दिसं विप्पलाइत्था ॥५७॥

तए शं तत्र मेहा ! तं दग्गइयं पारित्ता अयमेयारुवे अज्ज-  
त्थिए समुप्पज्जित्था, "कहिं शं मयणे मए अयमेयारुवे अग्गिसंभवे  
अणुभूयुत्वे" । तए शं तत्र मेहा ! तेसाहिं विसुज्जमाणाहिं तुभेयं  
परिणामेणं तयाउरखिजाणं कम्मणं सज्जोपसमेणं जाइसरणे समु-  
प्पजित्था । तए शं तुमं मेहा ! एयमहं नम्मं अभिसमेसि "एवं खलु  
मए अतीए भवे अयमेयारुवे अग्गिसंभवे समणूभू" ॥५८॥

तए शं तुमं मेहा ! अयमेयारुवे अज्जत्थिए समुप्पज्जित्था, तं  
सेयं खलु मम इयाणिं गंगाए महाणाइए दाहिणिट्ठकुलंसि विज्ज-  
निरिपायमूले दग्गिसंताणकारणाद्दा सपणं जूहेणं महइमहालयं  
मंडलं घाइत्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेमि २ सा एणं महं मंडलं घापसि  
जत्थ शं तणं धा पत्तं धा कट्टं धा कट्टए धा लया वा साणं धा रक्खं  
धा, तं सव्वे तिकखुत्तो घाहुणिय २ पाएणं उद्धरेसि, हत्थेणं गिरहाइ  
२ सा एणंते पाडेमि ।

1 Supply the rest from §§ 55 and 56.

तए शां तुमं मेहा ! तस्सेव मंडलस्स अदूरसामंते इत्थीणां

आहेवघं भुंजमाणो विहरसि ॥५६॥

तए शां अणुणाया कयाइं गिम्हाकालसमयंसि जेह्मामूले  
मासंसि पायव-संधंस-समुट्टिपणं सुक-तण-पत्त-मारुयसंजं गदीवि-  
पणं वणद-जालासंपलिरोसु वणंतेसु अणुणे वहवे सीहा य वघा  
य दीपा य रिच्छा य चित्तया य सियाला य ससया य जेणेव से मंडले  
तेणेव उवागच्छंति २ ता अग्गिभयाभिविहुया एगओ विलधम्मेषं  
चिट्ठंति तुमं पि मेहा ! तंसि चेव मंडले तेहिं वहुहिं सीहेहिं जाव  
ससएहिं सद्धिं पणओ विलधम्मेषं चिट्ठसि ॥६०॥

तए शां तुमं मेहा ! पापशां गत्तं कंडुइस्सामि त्ति कट्टु पाप  
उपिखंसे । तस्सि च शां अन्तरे अणुणेहिं य पलघतन्नेहिं सत्तेहिं पचा-  
इजमाणो २ ५मे ससए अणुपविट्ठे । तए शां तुमं मेहा ! गायं कंडु-  
इत्ता पुणारवि पायं निपिखविस्सामि त्ति कट्टु तं ससयं च अणुप-  
विट्ठं पासंसि २ ता पाणाणुकंपाप भूयाणुकंपाप से पाप अंतरा चेव  
संधारिण शां चेव शां निक्खित्तं ॥

तए शां तुमं मेहा ! ताए पाणाणुकंपाप मणुस्साउप यद्धे ॥

तए शां से वणदवे अइढाइजाइं राइंदियाइं तं वणं भामेइ ॥

तए शां से वणदवे शिट्ठए उअरण समाणो उवसंते शिज्जाए

याचि होत्था ॥६१॥

तए शां ते वहवे सीहा जाव ससया तं वणदवं उवसंतं वि-  
ज्जायं पासंसि २ ता अग्गिभयविप्पमुक्का हुहाए पिवासाए परिभूया  
समाणा ताओ मंडलाओ पडिनिक्खमंति २ ता दिसोदिसं विप्प-  
सरित्था ॥६२॥

तए शां तुमं मेहा ! जुएणे जरा-जज्जरिय-वेहे तंसि चेव मंड-  
लंसि धिज्जुहर धरणिंतलंसि संशिवडिण । तए शां मेहा ! तव सरी-  
रगंसि उज्जला येयणा पाउभूया । तए शां तुमं मेहा ! तं उज्जलं  
वेयणं तिगिण राइंदियाइं वेपमाणो एगं दाससयं परमाउयं पाल-



इत्ता इहेव जयुर्दिव्ये दीव्ये भारहे वासे रायगिहे नयरे सेणियस्सरय्यो  
भारिणीय देवीय कुच्छंसि कुमारत्ताय पद्याया ॥ ६३ ॥

तए शां तुमं मेहा ! अणुपुब्बेणं गम्भवासायो निक्खंते समाणे  
उम्मुक्कयालभावे जोब्बण्णं अणुपत्ते मम अंतिय मुंडे भविता आगा-  
राओ अणुगारियं पव्वइए ॥६४॥

तं जइ शां तुमे मेहा ! तित्तिक्खजोशिसुवागएणं अप्पडिल्ल-  
सम्मत्त-रयेणं से पाए पाणाणुक्कंपाए अंतरा चेष संघारिय शां  
चेव शां शिक्खित्ते किमंग पुण तुमं मेहा ! इयाणं विडलकुलसमुम्भवे  
लद्धपंचिदिए एव उट्टाण-वल-वीरिय-पुरिसकार-परवम-संजुत्ते  
मम अंतिय पव्वइए समणंणं निग्गंथाणं राओ वायणाए य  
पुच्छणाए जाव निगच्छमाणाणं पायसंवट्टणाणी शां सम्मं सहेसि  
तित्तिक्खसि अहिग्रासेमि ? ॥६५॥

तए शां तरस मेहस्स अणुगारस्स समणस्स भगवओ महा-  
वीरस्स अंतिय एयमट्ठं सोआ निसम्म सुभेहि परिणामेहि पसन्थेहि  
अज्जवसाणेहि जाइसरणे समुप्पणं । तए शां से मेहे अणुगारे  
एयमट्ठं सम्मं अभिसमेइ ॥

तए शां समणे भगधे महावीरे अन्नया कयाइं यहिया जणवय-  
विहारं विहरइ ॥

तए शां से मेहे अणुगारे विविहेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावे-  
माणे विहरइ ॥

तए शां से मेहे अणुगारे तेणं उरालेणं विपुलेणं तवोकम्मेणं  
मुक्के भुक्खे लुक्खे निम्मंसेः निस्सोणिए किसे धमणिसंतए जाए  
यावि होरपा ॥ जीवं जीवेणं गच्छइ जीवं जीवेणं चिट्ठइ । भासं  
भासिता गिलाइ भासं भासमाणे गिलाइ भासं भासिस्सामि ति  
गिजाइ ॥ से जहा नामए ईगालसगडिया इवा कट्ठसगडिया इवा  
पत्तसगडिया इवा ससइं गच्छइ ससइं चिट्ठइ एवामेव मेहे कुमारे  
समइं गच्छइ ससइं चिट्ठइ ॥६६॥

तेषां कालेषां तेषां समरणां भगवो भगवं महावीरे रायगिहे  
नयेर समोसदे ॥

तप षं तस्त मेहस्त अणुगारस्त राधां पुव्वरत्तावरत्त-  
फालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणास्त अयमेयारुधे अजभात्थिप  
समुप्पज्जित्था “एवं खलु अहं इमेणां उरालेणां तयोक्कमेणां जाव<sup>1</sup>  
ससंहं चिट्ठमि ॥६॥ अत्थि जाव मे उट्ठाणुकन्मे वले धीरिप सद्धा-  
विह-सयेगे जाव य मे धम्मायरिप धम्मांथपसप समणो- भगवं  
महावीरे विहरत्ताव मे सेयं फलं पाउब्भूयाए रयणीए समणोणां  
भगवया महावीरेणां अम्मगणुणायसमाणुस्त मयमेव पंच महव्व-  
याई आरोहिता गोयमाइए समणो निगंथे निगंथीओ य खामित्ता  
तहारुवेहिं धरेहिं मद्धि विउलपव्वयं सणिये २ दुरूहिता मयमेव  
मेहघणुसखिणागासे पुढविसिखापट्टयं पडिलेहिता संलेहणाभूसणा-  
भूसियस्त मत्तपाणापडियाइभिययस्त फालं अणुवकंखमाणस्त-  
विहरित्तप” एवं संपेहेइ २ ता फलं पाउब्भूयाए रयणीएजेणेव समणो  
भगवं महावीरे तेषां उवागच्छइ २ ता निज्जुत्तो आयाहिणां पया-  
हिणां फरेइ जाव पज्जुवासइ ॥६७॥

तप षा समणे भगवं महावीरे मेहं अणुगारं एवं घयासी “से  
खणं तव मेहा । राओ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि जाव<sup>2</sup> कालं  
अणुवकंखमाणस्त विहरित्तप ? से खणं मेहा ! अट्ठे समट्ठे ?” ॥

“इता ! अत्थि” ॥६८॥

तप षं से मेहे अणुगारे समणोणां भगवया महावीरेणां अम्म-  
गणुणाए समाणो मयमेव पंच महव्वयाई आरोहेइ जाव कालं अणु  
वकंखमाणो विहरत्ता ॥६९॥

तप षां ते येरा भगवंता मेहस्त अणुगारस्त अगिळाणा  
घेयावडियं फट्ठेति । तप षं से मेहे अणुगारे दुयालम घासांइ

1. Supply the rest from § 66.

2. Supply the rest from the preceding section.

मामगणपरिथागं पाउशिला मासियाण मंत्रेहणाण धान्याणं भूमिजा  
सठिद्रमतां छत्तामणाए छेनेता धान्नाहयपठिमेते उद्धरियमहे  
समादिपत्ते धाणुपुञ्जं काळगए ॥३०॥

तए सो ते घेरा भगवंता मेहे अणगारे पालगयं पासेति २ ता  
परिणिव्याणरत्तयं काउन्नगं करेति । तस्स धायारमंडं गिगहेति  
२ता जेगेय समसो भगवं महावीरं मेरोव उपागच्छंति २ एवं घयामी  
“एवं खलु देवाणुप्पियासां अंतेजासी मेहे नामं अणगारे पणिरभए  
विजाए मे सो देवाणुप्पिदि अणगणाए समासो जाय  
अणुपुञ्जेता काळगए ॥ एस्स सो देवाणुप्पिया ! मेहस्स अणगारस्स  
धायारमंडए” ॥३१॥

तए सो भगवं गोयमे समसो भगवं महावीरं एवं घयामी, “मे  
सो भंते ! मेहे अणगारे काळमाने काळं किथा कहिं गए कहिं  
उवयरणे ?” ॥

“एवं खलु गोयमा ! मम अंतेवासी मेहे नामं अणगारे विजाए  
महायिमासो देवताए उवयरणे” ॥

“एस्स सो भंते ! मेहे देवताओ देवलोगाओ कहिं गच्छिहि  
कहिं उववच्छिहि ?”

गोयमा ! महाविदेहे यासे सिज्झिहि, सुज्झिहि परिणिव्या-  
हिह संवदुपणायां अंते काहिरे” ॥३२॥

एवं खलु जंबु । समरणं भगवथा महावीरेणं अप्पोळंभनिमित्तं  
पदमस्स गायज्जकयणस्स अयमहे पणणत्ते सि येमि ॥ पदमं  
अज्जकयणं सम्मत्तं ॥

महुरेहिं निउयेहिं वययेहिं चोययंति धायरिया ।

सीसे कहिंनि खलिय जह मेहमुणिं महावीरो ॥१॥ ॥३३॥

## १ बालक मृगापुत्र

१. उस काल उस समय में मृगग्राम नामा नगर था । ( वर्णन ) \* । उस मृगग्राम नगर के बाहिर पूर्वात्तर दिशा अर्थात् ईशाने कोण में चन्दनपादप नाम उद्यान था ॥ ( वर्णन ) \* । वहाँ सुधर्म यक्ष का यक्षमन्दिर था ( वर्णन ) \* ॥
२. उस मृगग्राम नगर में विजय नामा क्षत्रिय राजा रहता था । उस विजय क्षत्रिय की मृगा नामा राणी थी । उस विजय क्षत्रिय का पुत्र मृगा राणी का आत्मज<sup>२</sup> मृगापुत्र नामा बालक था जो जन्म से ही अन्धा, जन्म से ही गूंगा, जन्म से ही दहिरा, जन्म से ही लँगड़ा, कुब्ज और यातुल था । न तो उस बालक के हाथ थे, न पैर, न कान, न आँख, न नाक; केवल उन अङ्ग उपाङ्गों की आकृति ( चिह्न ) मात्र थे ॥
३. व वह मृगा राणी उस मृगापुत्र बालक की गुप्त भोरे<sup>३</sup> में गुप्त अन्न पानी से रक्षा करती हुई रहने लगी<sup>४</sup>
४. उस मृगग्राम नगर में जन्म से अन्धा एक पुरुष रहता था । एक संचक्षु<sup>५</sup> पुरुष से लकड़ी द्वारा आगे ले जाया हुआ वह (अन्धा) जिस के सिर के बाल बिखरे हुए थे और जिस के मार्ग में पीछे

(१) मृगापुत्र, मृगालोढा वा मृगालोदिया के नाम से भी प्रसिद्ध है, क्योंकि उस के शरीर का आकार मांस के गोल पिपड जैसा था ॥

\* देखो नोट (११) नगर आदिक का वर्णन जैसा औपपातिक सूत्र में है विसा ही यहाँ दोहराना चाहिये ।

(२) आत्मज अथवा आत्मा अथवा शरीर से उत्पन्न हुआ पुत्र । राजाओं के अनेक राणियाँ होने के कारण जिस राणी के पुत्र पुत्री का वर्णन हो, उस राणी का नाम भी लिख देते हैं ।

(३) सं० भूमिगृहक—प्रा० भूमिचरक—भूरहस्य, भुहरा, भोहरा, भोरा ।

(४) याज्ञ में प्राय वर्तमान काल की क्रिया होती है परन्तु हिन्दो में उस का अनुवाद भूत काल से किया जाता है ।

(५) सं० सचक्षु,--प्रा० सचक्षु—सं० मुजाखा ।

मस्त्रियां, चटकर उड़े आते थे, मृगग्राम नगर में घर घर कटणा भरे रोने से अपनी वृत्ति बनाता हुआ रहता था० ॥

५. उस काल उस समय श्रमण भगवान् महावीर पधारे । परिपत् निकली ( अर्थात् लोग उपदेश सुनने गए ) । तब वह जन्म से अन्धा पुरुष लोगों के उस बड़े शब्द को सुन कर सचजु पुरुष से यूँ बोला कि : "हे देवताओं के प्यारे ! क्या आज मृगग्राम नगर में इन्द्र का महोत्सव है या स्कन्द का महोत्सव है, जो लोगों का शोर सुनता हूँ ?"

"हे देवताओं के प्यारे ! श्रमण भगवान् महावीर इस जगद पधारे हैं ।"

६. तब वह जन्म से अन्धा पुरुष सचजु पुरुष से यूँ बोला, "हे देवताओं के प्यारे ! चलो हम भी श्रमण भगवान् महावीर के दर्शन करें" ॥
७. तब सचजु पुरुष से लकड़ी के छार आगे ले जाया हुआ वह अन्धा पुरुष जिधर श्रमण भगवान् महावीर थे उधर आया, और तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिण करके वन्दना नमस्कार किया और ... ( चरणों में ) बैठ गया ॥
८. तब श्रमण भगवान् महावीर ने उस बड़ी सभा को धर्म का उपदेश दिया । सभा जिस ओर से आई थी उसी ओर चली गई१० ॥

(६) चटकर एक प्रकार की मक्खी होती है ।

(७) आज कल भी इस प्रकार के अन्धे भिखारी बड़े २ नगरों में देखे जाते हैं ।

(८) देवाहृषिय = ( पाली ) देवामंषिय = स० देवानां प्रियः कोमल निमन्त्रण में प्रयुक्त होता था परं पीछे से इस का अर्थ उल्टा होगया और जालम अर्थ में प्रयुक्त होने लगा ॥

(९) आदक्षिणं प्रदक्षिणं = भगवान् के दक्षिण ओर से प्रारम्भ कर के इस प्रकार उन के गिर्द घूमना कि अपना दक्षिण हाथ सदा भगवान् की ओर रहे ।

(१०) उपदेश का विस्तृत वर्णन जीपपातिक सूत्र में है ।

६. तब श्रमण भगवान् महावीर के सब से बड़े शिष्य इन्द्रभूति ( गौतम ) नामा साधु उस जन्म से अन्धे पुरुष को देख कर श्रमण भगवान् महावीर से यूँ बोले, "हे भगवन् ! क्या कोई ऐसा मनुष्य है जो जन्म से अन्धा और अन्धरूप हो ?"

"हां है ।"

"कहां है हे भगवन् ! वह जन्म से अन्धा अन्धरूप पुरुष !"

"हे गौतम ! इसी मृगग्राम नगर में विजय क्षत्रिय का पुत्र मृगा राणी का आत्मज मृगापुत्र नाम बालक जन्म से अन्धा इत्यादि<sup>११</sup>

१० तब भगवान् गौतम श्रमण भगवान् महावीर से यूँ बोले "हे भगवन् ! आप से आज्ञा पा कर मैं मृगापुत्र बालक को देखना चाहता हूँ ।"

"हे देवताओं के प्यारे ! जैसे तुम्हारी इच्छा ।"

११ तब वे भगवान् गौतम जिधर मृगा राणी का घर था उधर आए और मृगा राणी से यूँ बोले "हे देवताओं की प्यारी ! मैं तेरा पुत्र देखने को यहाँ<sup>१२</sup> आया हूँ ।"

१२ तब उस मृगा राणी ने चारों पुत्रों को जो मृगापुत्र बालक के छोटे भाई थे सब अलङ्कारों से विभूषित किया और भगवान् गौतम के चरणों में डाल दिया और ऐसे कहा, "यह तो भगवन् ! मेरे चारों पुत्रों को देख लें ।"

१३ तब भगवान् गौतम मृगा राणी से यूँ बोले, "हे देवताओं की प्यारी ! मैं तेरे इन पुत्रों को देखने यहाँ नहीं आया । वह जो तेरा सब से बड़ा पुत्र मृगापुत्र बालक है जो जन्म से अन्धा अन्धरूप है

(११) जैन धर्म में वर्णन शैली नियत प्रकार की है । नगर, चैत्य, राणा आदिक का जो वर्णन औपचारिक मूष में है अन्धर अन्धर वही वर्णन दूसरी जगह जब ज़रूरत हो रच दिया जाता है । परन्तु लिखने के कष्ट से बचने के लिये उस वर्णन का केवल आदि और अन्तिम शब्द लिख कर बाकी वर्णन के स्थान में जाव = जहां तक लिख देते हैं ।

(१२) हठय शब्द का अर्थ टीकाकार "शोध" करते हैं परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि इस का अर्थ स्थान वाची "यहाँ" है ।

श्रीर जिस को नू गुप्त भोरे में गुप्त अन्न पानी से पालनी है तिस को देखने में यहां आया हूँ ।

१४ तब वह मृगा राणी भगवान् गौतम से यूँ बोली "हे भगवन् ! ऐसा कौन छानी या तपस्वी है जिस ने अच्छी तरह गुप्त रखी हुई यह बात आप को भट कह दी ?" तब भगवान् गौतम मृगा राणी से यूँ बोले "हे देवता की प्यारी ! मेरे धर्माचार्य और धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर सर्वज्ञ सर्वदर्शी हैं । उन से मैंने इस बात को जाना है ॥

१५ जितने में मृगा राणी भगवान् गौतम के साथ यह यात्रालाप करती रही उतने में मृगापुत्र बालक के अन्न पानी का समय भी हो गया ॥

१६ तब वह मृगा राणी भगवान् गौतम से यूँ बोली, "हे भगवन् ! आप यहां ही ठहरें जब तक कि मैं आप को मृगापुत्र बालक दिखाता हूँ ।" यह कह कर जिधर रसोई (अन्न पानी का घर) थी उधर आई, कपड़े बदले, और एक लकड़ी की गाड़ी लेकर उसे खूब अन्न,<sup>१३</sup> पान,<sup>१३</sup> खादिम<sup>१३</sup> और स्वादिम<sup>१३</sup> वस्तुओं से भरा, भरकर जिधर भगवान् गौतम थे आई और यूँ बोली, "आइये भगवन् ! आप मेरे पीछे चलिये, ताकि मैं आप को मृगापुत्र बालक दिखाऊँ" ॥

१७ तब वह मृगा राणी जिधर भोरा था उधर आई और चौहरे कपड़े से मुँह बांधती हुई भगवान् गौतम से बोली "आप भी भगवन् ! मुखवस्त्रिका<sup>१४</sup> से मुँह बांध लें ॥ तब मृगा राणी के यूँ कहने पर भगवान् गौतम ने मुखवस्त्रिका से मुँह बांध लिया ॥

१८ तब उस मृगाराणी ने मुँह (परली तरफ) मोड़ कर भोरे का दर-

(१३) अन्न = भोजन, रोटी ; पान = दूध, शर्बत, चाय, लस्सी आदि ; खादिम = मिठाई, मेवा, स्वादिम = लींग, चुपारी, पान, तम्बाकू ॥

(१४) मुँह के आगे रखने का या बांधने का कपड़ा, समान ॥ यह वह पाठ है जिसे पुजेरे (देहरा घाटी) मुँह पर पट्टी न बांधने की सिद्धि में टुंडियों (स्यानक वाचियों) को दिखाते हैं ॥

वाज़ा खोला; उस में से ऐसी गन्ध निकली जैसी किसी मरे हुए साँप की हो बल्कि उस से भी बुरी ।

तब मृगापुत्र बालक उस बहुत अन्न पानी की गन्ध से अभिभूत हुआ हुआ उस अन्न पान में मूर्च्छित और गृधित होगया ॥

तब उस अन्न पान का स्वाद बदल गया और शीघ्र ही विध्वंस हो गया । उस के पीछे वह पूत (राध) और रुधिर में बदल गया । वह (मृगापुत्र) उस पूत और रुधिर को भी खा गया ।

तब मृगापुत्र बालक को देख कर भगवान् गौतम को इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ, 'अहो ! यह बालक पूर्वजन्म में किये हुए बुरे कर्मों के पापरूपी फल को भोग रहा है, यद्यपि मैं ने नरक या नारकी नहीं देखे परं प्रत्यक्ष यह मनुष्य नरक के समान दुःख भोग रहा है' । यह कह कर मृगा रानी से विदा हो कर, मृगा रानी के घर से निकल जिस तरफ भगवान् महावीर थे उस तरफ आए और यूँ बोले, "हे भगवन् ! आप से आज्ञा प्राप्त करके मैं जिधर मृगा रानी का घर था उधर आया यावत् (मृगापुत्र रुधिर राध) खागया<sup>१५</sup> । हे भगवन् ! वह मनुष्य पूर्व भव में कौन था ? किस नाम वाला था ? किस गोत्र वाला था ? उस ने क्या किया था जो उसका यह हाल है ? "

हे गौतम ! इसी जंबुद्वीप के भारतवर्ष में शतद्वार नामा एक नगर था (वर्णन) । उस शतद्वार नगर में धनपति नाम राजा था (वर्णन) । उस शतद्वार नगर के पूर्व दक्षिण की दिशा के हिस्से में विजयवर्धमान नामा एक खेड़ा था । उस विजयवर्धमान खेड़े का आभोग पाँच सौ ग्रामों का था ।

विजयवर्धमान खेड़े में एकाई नाम राष्ट्रकूट<sup>१६</sup> था जो अधर्मी और छोटे कामों में आनन्द मानता था । वह एकाई राष्ट्रकूट विजयवर्धमान खेड़े के पाँच सौ ग्रामों को बहुत से करोंद्वारा, भरौ<sup>१७</sup>

(१५) बाकी पाठ सूत्र ११—२० तक में से पढ़ो ।

(१६) राष्ट्र = राज्य, कूट = छोटी = राज्य की छोटी = चफसर, हारिम ।

(१७) महसूल ।



छाटा, वृद्धियों<sup>१८</sup> छाया और अर्शादियों<sup>१८</sup> छाया संग करता हुआ, निर्धन करता हुआ विहरता था ॥

२४ तब वह एकाई राष्ट्रकूट विजयवर्धमान खड़े के बहुत से मरदा, रंस और शार्गंसाहों और और बहुत से ग्राम्य पुत्रों के कायों में और कामों में सुनता हुआ कहता था "मैं मर्दी सुनता" और न सुनता हुआ कहता था "मैं सुनता हूँ" । इसी प्रकार देवता हुआ, पोलता हुआ रोना हुआ, जानता हुआ, उनका ही कहता था । इस तरह उस एकाई राष्ट्रकूट ने बहुत से पाप कर्म का बन्ध किया ॥

२५ तब एक वृद्ध उस एकाई राष्ट्रकूट के शरीर में एक पारंगी ही सालह रोग व्याधियों प्रकट हुई जैसे—श्याम रोग, चाँसी, उपर, दाह, पेट का दर्द, भगम्बर, यथामीर, यदहजमी, दृष्टिगल, मस्तक शूल, आकारित,<sup>१८</sup> आँज का दर्द, कान का दर्द, सुजली, जलोदर और कोढ़ ।

२६ तब वह एकाई राष्ट्रकूट सालह रोग व्याधियों में अभिभूत हुआ कुटुम्ब के आदिमियों<sup>२०</sup> को बुला कर ऐसे कहता भया, "हे देवताओं के प्यारे ! तुम जाओ, विजयवर्धमान खड़े में जो खीररते<sup>२१</sup> चीक आदि हैं वहाँ यड़े ऊँचे शब्द से उद्घोषण करते हुए कहो कि हे देवताओं के प्यारे ! एकाई राष्ट्रकूट के शरीर में सालह रोग आतङ्क पैदा हो गये हैं यथा — श्याम याघत् कोढ़ । इस लिये यदि कोई वैद्य या वैद्य पुत्र<sup>२२</sup>, छानक<sup>२३</sup> या शानकपुत्र एकाई राष्ट्रकूट के इन सालह रोग आतङ्को में से एक रोग आतङ्क को भी अच्युत करना चाहता है तो एकाई राष्ट्रकूट उस को बहुत सा धन माल देगा । इसी प्रकार दूसरी

(१८) चाँसी, रिशपत ।

(१९) भोजन में चरनि ॥

(२०) नीकर चाकर ॥

(२१) शंघाटा = मुहलता, त्रिक = जहाँ तीन रस्ते मिलते हैं; यदुष्क, चम्बर = चीक, गुराहा, महापथ = बड़ी सड़क ॥

वैद्य ॥

(२२) जानकार, सियाना ॥

वार भा तीसरी वार भी उद्घोषण करो" । उन कुटुम्ब के आदमियों ने वैसे ही किया ॥

२७ तब विजय वर्धमान खेड़े में इस प्रकार की उद्घोषणा को सुन कर के बहुत से वैद्य शस्त्रकोश<sup>२४</sup> हाथों में ले कर अपने २ घर से निकले, जिधर एकाई राष्ट्रकूट था उधर आए, आकर एकाई के शरीर की परीक्षा की, फिर उन रोगों के कारण पूछे और एकाई राष्ट्रकूट के उन सोलह रोग आतङ्कों में से एक को भी बहुत सी मालिशों से, तेलों के पिलाने से, घमन कराने वाली औषधियों से, जुलायों से, सीचने से<sup>२५</sup>, अपस्नानों से<sup>२६</sup>, अनुपानों से<sup>२७</sup>, वस्ति कर्म से<sup>२८</sup>, निरूह से<sup>२९</sup>, नस काटने से, तच्छने से, पच्छने से, छिलकें जड़ें कन्दमूल पत्ते फूल धीज खिलाने से, शिलिका<sup>३०</sup> गुडिका<sup>३१</sup> औषध भेषज वगैरह से दूर करना चाहते थे । परन्तु दूर न कर सके ॥

२८ तब वह सारे वैद्य जब उन सोलह रोग आतङ्कों में से एक को भी दूर न कर सके, थके हारे, जिधर से आए थे उधर ही चले गये ॥

२९ तब वह एकाई राष्ट्रकूट उन सोलह रोग आतङ्कों से पीड़ित राज्य में राष्ट्र में मूर्च्छित हो गया । राज्य की प्रार्थना अभिलाषा करता हुआ दुःख से आर्त्तध्यान के वश हुआ हुआ अढाई सौ (२५०) वर्ष की पूर्ण आयु भोग कर कालमास<sup>३२</sup> में काल कर के इसी रत्न प्रभा पृथ्वी के उत्कृष्ट एक सागरोपम स्थिति वाले नारकियों में नारकी पने पैदा हुआ ॥

३० वह इस के पश्चात् वहां से वापिस आकर यहीं मृग ग्राम नगर

(२४) Surgical box, चीजारों तथा दवारियों का डब्बा ॥

(२५) छीटे देने से ।

(२६) भाप घाटि में स्नान कराना ।

(२७) कमजोरी दूर करने वाली दवा Tonic

(२८) पानी चढ़ा कर घन्तड़ियां साफ करना ॥

(२९) गुदा में तेल चढ़ा कर शीघ्र व.गना Eucema.

(३०) सिलाइयां ॥

(३१) गोलियां ॥

(३२) मृत्यु का समय ॥

में मृगा रानी की कुक्षि में पुत्र पने उत्पन्न हुआ । तब उस मृगा रानी के शरीर में बड़ी समृद्ध याचत् तेज वेदना प्रकट हुई । जब से मृगापुत्र बालक मृगा रानी की कुक्षि में गर्भपने आया तब से लेकर मृगा रानी विजय क्षत्रिय को अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय<sup>३३</sup> लगने लगी ।

३१ तब उस मृगा रानी को रात के पहिले भाग में किसी समय कुटुम्ब जागरण<sup>३४</sup> करती हुई को यह ध्यान आया, 'मैं पहिले विजय क्षत्रिय को प्यारी, विश्वास्य और अनुमत थी । जब से लेकर यह गर्भ मेरी कुक्षि में गर्भपने आया है तब से लेकर मैं विजय क्षत्रिय को अनिष्ट और अकान्त हो गई हूँ । नहीं चाहता है विजय क्षत्रिय मेरा नाम या गोत्रनाम<sup>३५</sup> लेना भी फिर दर्शन या परिभाषा करने का तो कहना ही पया है ॥ इस लिये यह मेरे लिये अच्छा होगा कि मैं इस गर्भ को अनेक गर्भसाडनों से, गर्भ पातनों से, गर्भगालनों से और गर्भमारणों से नाश करदूँ । यह निश्चय कर के बहुत से श्वारे, कड़वे, तीक्ष्ण गर्भसाडनों को खाती हुई पीती हुई उस गर्भ को साडना चाहती हूँ । लेकिन यह गर्भ न ही सडता है न ही गिरता है ॥ तो यह मृगा रानी जब उस गर्भ को साडने या गिराने को समर्थ न हुई, थकी हारी वेवस उस गर्भ को घड़े दुःख के साथ परिवहन करने लगी ॥

३२ तब नौ महीनों के पूरा होने पर मृगा रानी के एक बालक पैदा हुआ जो कि जन्मही से अन्धा याचत् आकृति मात्र था । तब यह मृगा रानी उस अन्धरूप बालक को देख कर डर गई और अपनी अम्बधान्त्री<sup>३६</sup> को बुला कर कहने लगी कि हे देवताओं

(३३) जैन सूत्रों में एक ही अर्थ वाले बहुत से शब्द इकट्ठे आ जाते हैं ॥

(३४) कुटुम्ब सम्बन्धि कर्णालों में जागती हुई ॥

(३५) पहिले हिन्दोस्तान में भी गोत्र नाम प्रधान हुआ करता था। जैसे गौतम, पतञ्जलि वगैरह । यह नाम उस कुल में पैदा हुई सब व्यक्तियों का समान नाम हुआ करता था, विशेष नाम भिन्न होते थे जैसे क्वाज क्वाज वितापत में है ।

(३६) जिस ने मृगा रानी को पाला था ॥

की प्यारी ! इस बालक को एकान्त में किसी रूढ़ी ( कुड़े के ढेर ) पर फँक आओ ।”

३३ तब उस अम्बधात्री ने “अच्छा” कह कर मृगा रानी के वचन को स्वीकार किया और जिधर विजय क्षत्रिय था उधर आई और बोली, ‘हे स्वामिन् ! मृगा देवी के नौ महीने पूरे होने पर यावत् आकृति मात्र था यावत् डर गई ३७ । मुझे बुला कर कहा जाओ, इसको फँक आओ । इस वास्ते हे स्वामिन् ! आप आजा दें कि इसको एकान्त में रूढ़ी पर फँक आऊँ या न ॥

३४ तब यह विजय क्षत्रिय अम्बधात्री के पास से इस बात को सुन कर उसी प्रकार डरा हुआ मृगा रानी की ओर आकर बोला, “हे देवताओं की प्यारी ! यह तुम्हारा पहिला गर्भ है ॥ शगर तुम इसको एकान्त में रूढ़ी पर फँक दोगी तो तुम्हारी सन्तान स्थिर न होगी । इसलिये तुम इस बालक को गुप्त भोरे में गुप्त अन्न पानी से पालो इस तरह तुम्हारी सन्तान स्थिर रहेगी” ॥

३५ तब मृगा रानी ने “अच्छा” कह कर विजय क्षत्रिय के उस वचन को स्वीकार किया और उस बालक को गुप्त भोरे में गुप्त अन्न पानी से पालने लगी ॥

इस प्रकार हे गौतम ! मृगापुत्र बालक अपने पुराने अशुभ कर्मों के पाप फल को भोग रहा है ॥

३६ “हे भगवन् ! मृगापुत्र बालक कालमास में काल करके कहाँ जायगा ? कहाँ पैदा होगा ?”

“हे गौतम ! मृगापुत्र बालक चाईस सालकी पूर्ण आयु भोग कर काल मास में काल करके इसी जम्बुद्वीप के भारतवर्ष में घैता-ढपगिरि पर्वत के मूल में सिंह कुल में सिंहपने उत्पन्न होगा । वह वहाँ पर सिंह होगा, अधर्मी यावत् साहसिक, बहुत पाप कमावेगा । तब काल मास में काल करके इसी रत्नप्रभा पृथ्वी में

एक सागरोपमः स्थिति घाले नारकियों में पैदा होगा । इस प्रकार पश्चात् यहाँ से यापिस आकर यह जो जलघर पंचेन्द्रिय तिर्यक योनियों के मच्छ, कच्छुप, प्रह, मकर मार आदि की साढ़े धार लाख जाति कुल, कोटि योनि प्रमुखा हैं उन में से एक एक योनि में अनेक लाख बार फिर फिर जन्म लेंगा । फिर यहाँ से यापिस आकर इसी तरह घं, पायों में, भुजङ्गों ( सर्पादि ) में, श्रेयस् ( पक्षी आदि, में, चतुरिन्द्रियों में, त्रि-इन्द्रियों में द्वि-इन्द्रियों में धनस्पति के कडवे वृक्षों में, कडवे दूध वाले वृक्षों में वायु, तेजस् अप, पृथ्वी काय के जीवों में अनेक लाख बार पैदा होगा ॥

- ३१ यहाँ से यापिस आकर सुप्रतिष्ठपुर में वैल पने उत्पन्न होगा । यहाँ याल्यायस्था को उल्लाह कर एक इफा घर्षा ऋतु के प्रारम्भ में गङ्गा महा नदी के किनारे की मिट्टी को सौंदता पृश्ना किनारे धार गिर जाने पर काल भास में काल करके उसी सुप्रतिष्ठपुर नगर में श्रेष्ठि कुल में पुत्र पने उत्पन्न होगा । यहाँ पर यह याल्यायस्था को उल्लाह कर यौवन अवस्था को प्राप्त हो कर तथा रूप स्वयं के पास धर्म सुन कर मुहिडन हो कर गृहस्वीक से साधु बन कर धर्मण पर्याय ( साधुपन ) को पाल कर, आलोचना औ प्रतिव्रमण करके, समाधियुक्त, काल भास में काल करके सौ धर्म कल्प में देवता पने उत्पन्न होगा । यहाँ से जयवन् ४० करके महा विदेह क्षेत्र में सिद्ध होगा ॥

- ३२ इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर मायत् समाप्त में प्रथम अध्ययन का यह अर्थ कहा है । यह मैं कहता हूँ ॥

( विपाक सूत्र के प्रथम धृतस्कन्ध का प्रथम अध्ययन )

(३८) अर्थात् समुद्र की उबना वाला काल का परिमाण । १००८०००००००००००००००० पश्योपम । एक योजना लम्बा चौड़ा गहिरा कूर्चा बारीक बाल के टुकड़ों के दबा कर बना जाय, जिन एक टुकड़ा सौ बरस पीछे निकाला जाय । जिसके देर में वह कूर्चा खाली हो, उतना ही काल एक पश्योपम होता है ।

(३९) आगार = घर, आगार = घर सम्बन्धि, गृहस्वी; अनगार = जिसका घर न हो, साधु ।

(४०) देवताओं के मरने को जयवन् ( वृत्त ) कहते हैं ।

## २. ऋषभ भगवान् का निर्वाण

१. वह जो हेमन्त<sup>१</sup> ऋतु का तीसरा मास, पांचवां पक्ष माघ यदि है उस माघवदि की तेरहवीं तिथि को दस हजार साधुओं से परिचृत अष्टापद पर्वत के शिखर पर निर्जल चौदहवें उपवास के साथ, पर्यङ्क आसन में बैठे हुए दिन के पूर्व भाग में अभिजित् नक्षत्र का योग आने पर, सुषम-दुषम आरे के नवासी (८६) पक्षों के शेष रहते हुए अर्हन् भगवान् ऋषभ देव ने काल किया यावत् सब दुःखों से रहित हो गए ॥
२. जिस समय कोसल निवासी अरहन्त ऋषभ भगवान् ने काल किया, और जन्म जरा मरण रूपी घन्धनों से छूट गए तथा सिद्ध, पुद्ग और सब दुःखों से रहित हुए उस समय देवेन्द्र देवराज शक्र का आसन हिला ॥
३. तब देवेन्द्र देवराज शक्र ने अपने आसन को हिला देव्य अवधि ज्ञान का प्रयोग किया और तीर्थंकर भगवन्त तक अवधि ज्ञान पहुंचा कर<sup>२</sup> कहा "ओ हो ! जम्बुद्वीप के भारत वर्ष में कोसल निवासी अरहन्त ऋषभ भगवान् का निर्वाण हुआ है। चूंकि अतीत, वर्तमान और अनागत देवेन्द्र देवराज शक्रों का यह परम्परा धर्म है कि तीर्थंकरों की निर्वाण महिमा करें, इस घास्ते मैं भी जाऊं और भगवान् तीर्थंकर की निर्वाण महिमा करूं; यह कह कर चौरासी हजार सामानिक देवताओं से, तेतीस तायत्तीसक<sup>३</sup> देवताओं से, चार लोक पालों से यावत् चारों ओर के चौरासी हजार आत्मरक्षक देवताओं से, और बहुत से सौधर्म कल्प वासी, चैमानिक देवता देवियों से घिरा हुआ उस उत्कृष्ट देव गति से यावत् असंख्य द्वीप समुद्रों के बीचों बीच जिधर अष्टापद पर्वत

(१) जैन शास्त्र में एक बरस की तीन मौसमों में भी कही हैं जैसे बरसात ( माघ, भाद्र, अश्वीज, कातिक ) हेमन्त ( मरदी ) और ग्रीष्म ( गजनी ) ।

(२) अर्थात् अवधि ज्ञान से भगवान् को देखा ।

(३) यह देवता पूर्व जन्म में ३३ आयक से जो एक जैसी धर्म क्रिया करके देवता बने इन का वर्णन भगवती सूत्र में है ।

पर भगवान् तीर्थकर का शरीर था उधर आया और उदास, निरानन्द और अध्रुपूर्ण नेत्रों वाला तीर्थकर के शरीर को तीन चार आदक्षिण प्रदक्षिणा करके न बहुत निकट न बहुत दूर, सेवा करता हुआ बैठ गया ॥

४ तब ईशान नामा देवेन्द्र देवराज उत्तरार्ध लोक का स्वामी अष्टा-ईस लाख विमानों का मालिक, हाथ में शूल धारण किये बैल पर चढ़ा हुआ सुरेन्द्र, साफ सुधरे वस्त्र पहिरे हुए शक्र की तरह अपने परिवार के साथ आया यावत् बैठ गया ॥

५ तब शक्र नामा देवेन्द्र देवराज उन बहुत से भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक देवों को इस प्रकार बोला, "हे देवताओं के प्यारों ! शीघ्र ही नन्दन वन से सरस गोस्तीस<sup>४</sup> और चन्दन की लकड़ी से आश्रों और तीन चिखाप-बनाश्रों—एक भगवान् तीर्थकर के लिये, एक गणधरों के लिये, और एक बाकी साधुओं के लिये । उसके पश्चात् हे देवताओं के प्यारों ! मृग, घैल, घोड़े यावन् जंगली बेलों पत्तों से चिमित तीन पालकियां बनाओ ॥

६ तब शक्र नामा देवेन्द्र देवराज ने जरा मरण से रहित हुए तीर्थकर भगवान् के शरीर को पालकी में डाल कर चिखा पर रख दिया ॥

तब उन बहुत से देवताओं ने गणधर और साधुओं के शरीर को पालकी में डाल कर चिखा पर रख दिया ॥

७ तब उस शक्र नामा देवेन्द्र देवराज ने अग्नि कुमार देवताओं को बुला कर कहा "हे देवताओं के प्यारों । शीघ्र ही तीर्थकर की चिखा में और गणधर और साधुओं की चिखा में अग्नि काय विकुर्वा<sup>५</sup> (उत्पन्न करो) । तब उन अग्नि कुमार देवताओं ने अग्नि काय विकुर्वा ॥

८ तब वायु कुमार देवताओं ने वायु विकुर्वा, अग्नि काय को उद्दीपन किया, तीर्थकर के शरीर को, गणधर और साधुओं के शरीरों को जला दिया ॥

४) एक प्रकार की चन्दन की लकड़ी ।

५) देव शक्ति ( जाटू ) में वायु बनाने को 'विकुर्वा' कहते हैं ।

६ तब उन देवताओं ने सब चिखाओं में श्रृंग, तुरुक, घी और शहद डाला ॥

तब मेघ कुमार देवों ने उन चिखाओं का क्षीर समुद्र के पानी से चुभा दिया ॥

१० तब उस शक्र नामा देवेन्द्र देवराज ने तीर्थंकर भगवान् की ऊपर की दाहिनी डाढा ले ली । ईशान नामा देवेन्द्र देवराज ने ऊपर की चामी डाढा ली । चमर नामा असुरेन्द्र असुरराजा ने नीचे की दाहिनी डाढा ली । बली नामा वैरोचनेन्द्र वैरोचन राजा ने नीचे की चामी डाढा ली । बाकी के भवन पति यावत् वैमानिक देवताओं ने यथा योग्य बाकी के शरीर के श्रृंग लिये, किसी ने जिन भगवान् की भक्ति करके, किसी ने परम्परा का आचार समझ कर और किसी ने धर्म समझ कर ॥

११ तब उस शक्र नामा देवेन्द्र देवराज ने उन देवों को कहा "शीघ्र ही हे देवताओं के प्यारों ! सर्व रत्न मय चैत्य स्तूप<sup>६</sup> बनाओ— एक तीर्थंकर भगवान् की चिखा पर, एक गणधरों की चिखा पर और एक बाकी साधुओं की चिखा पर । उन देवों ने वैसे ही किया ।

१२ तब उन सब देवों ने आठ दिन का महोत्सव करके जिधर अपने विमान, भवन, सभा और मानवक चैत्यस्तम्भ थे उधर आकर घञ्जमर्या गोल डब्बों में जिन भगवान् की डाढाओं को डाल दिया और बढ़िया सुन्दर माला और धूप से उन की पूजा की ॥

( जम्बुद्वीप प्रशस्ति )

(६) स्तूप एक प्रकार की मड़ी होती थी जो बाँटों और जैतियों में बहुत पूजे जाते थे । जैन स्तूप मथुरा में मिला है, बाँट स्तूप तो हिन्दोस्तान भर में मिलते हैं ।



### ३ मेघकुमार

- १ उस काल उस समय में चंपा नामा नगरी थी । (वर्णन) । उस चंपा नगरी के बाहिर पूर्वोत्तर दिशि अर्थात् ईशान कोण में पूर्ण-भद्र या पुण्यभद्र, नामा चैत्य था ( वर्णन ) । वहां चंपा नगरी में कोनिका नामा राजा था ( वर्णन ) ।
- २ उस काल उस समय में ध्रमण भगवान् महावीर के शिष्य आर्य सुधर्मा नाम स्वधिर जाति से संपन्न, दक्ष, रूप, विनय, ज्ञान, दर्शन, चारित्र तथा लाघव से संपन्न, ओजस्वी, तेजस्वी, वर्चस्वी, यशस्वी, क्रोध को जीते हुए, मान को जीते हुए, माया को जीते हुए, लाभ को जीते हुए, इन्द्रियों को जीते हुए, निद्रा को जीते हुए, परीपहों को जीते हुए, जीने की आशा और मरने के भय से रहित, तप में प्रधान, गुण में प्रधान इसी प्रकार करण, चरण, निग्रह, निश्चय, आर्जव, मार्दव, लाघव, क्षमा, गुप्ति, मुक्ति, विद्या, मन्त्र, ब्रह्मचर्य, वेद, नय, नियम, सत्य, शौच, ज्ञान, दर्शन तथा चारित्र में प्रधान, उदार, धीर, धीरव्रती, धीर ब्रह्मचर्य वासी, शरीर में निर्मोही, सारी तेजु लेश्या के शरीर में संकोचे हुए, चौदह पर्व धारी, चार ज्ञान के धरता, पांच सौ साधुओं से परिचुत, आगे ही आगे चलते हुए, ग्राम से ग्राम को जाते हुए मुख पूर्वक विहार करते हुए जिधर चंपा नगरी थी, जिधर पूर्णभद्र चैत्य था, उधर आए । आकर यथायोग्य स्थान प्राप्त करके संयम और तप से आत्मा को पवित्र करते हुए रहने लगे ।
- ३ ( तब चंपा नगरी से परिपदा निकली । कोनिका निकला । धर्म कहा गया । परिपदा जिस दिशा से आई थी, उसी दिशा को चली गई । )

(१) कोनिका या कूनिका जिसका दूसरा नाम अनातपत्रु था, जैन, बौद्ध साहित्य में बहुत पवित्र है । पुराणों में भी इस का नाम आता है ।

(२) एक प्रकार की शक्ति जिसे शरीर से निकाल कर उसके साथ दूसरे को भक्षण कर सकते हैं । यह तपस्वा करने से प्राप्त होती है ।

उस काल उस समय में आर्य सुधर्मा नाम साधु के बड़े शिष्य आर्य जम्बू नाम साधु काश्यप गोत्रीय, सात हाथ ऊंचे, आर्य सुधर्मा स्थविर के न ही दूर न ही निकट, जानू ऊंचे और सिर नीचे किये हुए, ध्यान रूपी कोठे में गए हुए संयम और तप से आत्मा को शुद्ध कर रहे थे ।

४ तब वह जम्बू साधु धडा घाले, संशय वाले, फुटूहल वाले उठे जिधर आर्य सुधर्मा स्थविर थे उधर आए और आर्य सुधर्मा स्थविर को तीन बार आदर्शपूर्ण प्रदक्षिणा कर के, वन्दना नेमस्कार कर के, आर्य सुधर्मा स्थविर को न बहुत निकट और न बहुत दूर सेवा करते हुए, नमस्कार करते हुए, सम्मुख हो कर, हाथ जोड़ कर, धिनय के साथ सेवा करते हुए बोले कि 'हे महाराज ! यदि भ्रमण भगवान् महावीर ने जो कि आदि के करने वाले हैं, तीर्थ के करने वाले हैं, स्वयं संबुद्ध हैं, त्रिलोकी के नाथ हैं, त्रिलोकी के प्रदीप हैं, त्रिलोकी के उद्योत करने वाले हैं, अभय दान देने वाले हैं, शरण देने वाले हैं, चक्षु देने वाले हैं, मार्ग देने वाले हैं, धर्म देने वाले हैं, धर्म के उपदेशक हैं, उत्तम धर्म रूपी पृथ्वी के चक्रवर्ती हैं, उत्तम, अप्रतिहत ज्ञान दर्शन के धारी हैं, ( कर्मरूपी वैरियों को ) जीतने वाले हैं, ( दूसरों को ) जिताने वाले हैं, ( आप ) बुद्ध हैं, ( औरों को ) बोध कराने वाले हैं, ( आप ) मुक्त हैं, ( औरों को ) मुक्त कराने वाले हैं, ( स्वयं ) तरे हुए हैं, ( औरों को ) तारने वाले हैं, जिन्होंने सुखदाई, अचल, दुःखरहित, अनन्त, अक्षय, बाधा पीडा रहित, अपुनरावर्तक, शाश्वत स्थान को प्राप्त किया है, अगर उन्होंने पांचवे अङ्ग ( भगवती ) का यह अर्थ निरूपण किया है तो महाराज ! छुटे अङ्ग शाताधर्मकथा का क्या अर्थ कहा है ?

हे जम्बू ! भ्रमण भगवान् महावीर ने छुटे अङ्ग के दो श्रुतस्कन्ध कहे हैं, छातः और धर्मकथा ।

(३) छातः = दृष्टान्त, किसी धर्म सम्बन्धि गुण या अवगुण को स्पष्ट रूप से वर्णन करने के लिये दृष्टान्त, कथा या उपमा ।

५ महाराज ! अगर धमण भगवान् महावीर ने छूटे अन्न के दो ध्रुत स्कन्ध कहे हैं, तो महाराज ! पहिले ध्रुतस्कन्ध के कितने अध्ययन कहे हैं ?

हे जम्बू ! धमण भगवान् महावीर ने शातों के उन्नीस अध्ययन कहे हैं जैसे १ उक्लिप्त<sup>४</sup> शात, २ संघाडा, ३ अण्ड, ४ कूर्म, ५ शैलक, ६ तूम्या ७ रोहिणी, ८ मल्ली, ९ माफन्दी, १० चन्द्रमा, ११ दाय ह्य ( घृत ) १२ उदक पानी, शात, १३ मंडक, १४ संतली, १५ नन्दि फल, १६ अमर कंक्या, १७ आकीर्ण जाति का घोडा, १८ सुममा दारिका और १९ पुण्डरीक शात यह उन्नीस शात हैं ।

६ हे महाराज ! अगर धमण भगवान् महावीर ने शातों के उन्नीस अध्ययन कहे हैं, तो महाराज ! पहिले अध्ययन का क्या अर्थ कहा है ?

हे जम्बू ! उस काल उस समय में इसी जम्बुद्वीप के भारत वर्ग के दक्षिणार्ध भारत में राजगृह नाम नगर था ( वर्णन ) । गुण शिल्क नाम चैत्य था ( वर्णन ) । वहां राजगृह नगर में श्रेणिक नामा राजा था ( वर्णन ) । उस श्रेणिक राजा की नन्दा नाम रानी थी ( वर्णन ) । उस श्रेणिक राजा का पुत्र नन्दा रानी का आत्मज अभय नाम कुमार था ( सब गुणों में ) पूर्ण यावत् रूप-वान् । श्रेणिक राजा को सब कार्यों में उस पर विश्वास था । वह उसके राज्य की, राष्ट्र की, कोश की, महल की, सेना की, घाहनों की, नगर की, अन्तःपुर की स्वयंसेव व्यवहारी करता हुआ रहता था ।

७ अथ उस श्रेणिक राजा की धारिणी नामा रानी थी । एक बार रात्रि के पहिले भाग में धारिणी रानी जब कि वह अपनी सेज पर कुछ खोई कुछ जागती हुई अंध रही थी एक बड़े सात हाथ ऊंचे, चांदी के पर्वत की भांति श्वेत, आयाश में सुन्दरता के साथ खेलते हुए दौड़ते हुए हाथी को अपने मुंह में जाले हुए

(४) उठाया हुआ । मेघ कुमार ने हाथी के भय में पैर उठाए रक्का था इस से इस शात ( घृष्टान्त ) का नाम उक्लिप्त हुआ, देखो सूत्र ६१ ४

को देखकर जाग पड़ी। दृष्ट तुष्ट होकर उस स्वप्न को दिल में धारण करके अपनी सेज पर से उठी और राजहंस जैसी धीर और शान्त गति के साथ जिधर श्रेणिक राजा था उधर आई आकर श्रेणिक राजा को दृष्ट; कान्त और प्रिय वचनों से जगाया। श्रेणिक राजा से आज्ञा प्राप्त करके नाना मणि रत्नों से चित्रित भद्रासन पर बैठ गई और आश्वस्त विश्वस्त होकर मस्तक पर अञ्जलि करके इस प्रकार बोली, "हे देवताओं के प्यारे ! आज उस ऐसी सेज पर कुट्टु सोती कुट्टु जागती हुई स्वप्न में अपने मुंह में हाथी को जाते हुए देख कर मैं जाग पड़ी। अब हे देवताओं के प्यारे ! इस स्वप्न का क्या विशेष फल होगा ?

८ तब वह श्रेणिक राजा उस धारिणी रानी के पास से यह बात सुन कर दृष्ट तुष्ट हुआ उस स्वप्न को दिल में धारण करके उस पर विचार में मग्न हुआ और अपने स्वाभाविक मति पूर्वक विज्ञान से उस स्वप्न के अर्थ का निश्चय किया और धारिणी रानी को बधाई देता हुआ इस प्रकार बोला, "हे देवताओं की प्यारी ! तुमने बड़ा उदार स्वप्न देखा है, बड़ा मङ्गलकारी स्वप्न देखा है। हे देवताओं की प्यारी ! तुम्हें धन का लाभ होगा, तुम्हें पुत्र का लाभ होगा, सुख का लाभ होगा। नौ महीनों के पूरे होने पर साढ़े सात दिन रात घीतने पर हमारे कुल के भण्डे रूप, हमारे कुल के भूषण रूप बालक को जनेगी और वह बालक बाल्यावस्था को उल्लङ्घ कर शूर धीर राजा होगा। इस लिये आरोग्य, तुष्टि, दीर्घायु कल्याणकारक तुम ने हे देवी ! स्वप्न देखा है। इस तरह यार २ उस को बधाई देता रहा।

९ तब वह धारिणी रानी श्रेणिक राजा से इस प्रकार उत्तर दी हुई दृष्ट तुष्ट अपनी सेज पर बैठ गई और यूँ बोली कि, "मत्त यह मेरा उत्तम, प्रधान और मङ्गलक स्वप्न दूसरे छोटे स्वप्नों से काटा जाय," यह विचार कर के देव शुभ सम्बन्धी शुभ और धार्मिक कथाओं से स्वप्नजागरण जागती रही ॥

५ गर्भवती स्त्री को स्वप्न घाना और दोहल (रक्त प्रसव) का होना इसकी प्रथा बहुत पुरानी है ॥

१० तब उस धौगिक राजा ने विविध शास्त्रों में कुशल एवं स्वप्न के फल बतलाने वालीं को बुलाया और धारिणी रानी को देखे हुए स्वप्न का फल पूछा ।

११ इस प्रकार पूछने पर वह स्वप्न पाठक स्वप्न शारङ्गों को उच्चारण करते हुए बोले, "हे स्वामिन् ! हमारे स्वप्नशास्त्र में दमासीत स्वप्न और नील महास्वप्न कुल बदलत स्वप्न कहे हैं । तब हे स्वामिन् ! अरहन्तों की माताएँ, आर्यवर्णियों की माताएँ अरहन्तों के या अमर्त्यों के गर्भ में आने पर इन तीनों महास्वप्नों में से यह चौदह महास्वप्न देख कर जाग पड़ती है जैसे:—हार्षी, शैल, मिह, अभिषेक, माया, अग्नि, सूर्य, शयना, सुम्न, कमलों का तालाब, सागर, विमान, अपन, रत्नों का ढेर और ( अग्नि की ) उत्राला । फिर हे स्वामिन् ! माण्डलिकों की माताएँ माण्डलिक के गर्भ में आने पर इन चौदह महास्वप्नों में से किसी एक महास्वप्न को देख कर जाग पड़ती है । इस लिये हे स्वामिन् ! धारिणी रानी ने बड़ा उद्धार मग्न देखा है । अब निश्चय से हे स्वामिन् ! मी महीनों के गूरे होने पर धारिणी रानी के एक बालक पैदा होगा और वह बालक मी या तों राज्य का पति राजा होगा या पवित्र आत्मा वाला मायु ।"

१२ तब उस धारिणी रानी को दो महीनों के गुजर चुकने पर और तीसरा महीना लगने पर उस गर्भ के दोहले के समय में इस प्रकार का अकाल मेंपों में दोहला उत्पन्न हुआ, 'चन्द्र्य है यह माताएँ, पवित्र है यह माताएँ आं मेंपों के उदय होने पर हस्ति रत्न पर चढ़ी हुई' सय तरफ घूमती हुई अपने दोहले को पूर्ण करती है । इसलिये मैं मी मेंपों के उदय होने पर यावत् दोहले को पूर्ण करूँ ।

१३ तब यह धारिणी रानी उस दोहले के अर्पण रहने पर असंमत दोहला असंपूर्ण दोहला सूखी हुई, भूखी हुई, पतली चुबली हो गई ।

१४ तब उस धारिणी रानी के अज्ञ परिचारक और आभ्यन्तरिक सदा-चेष्टक जिधर धौगिक राजा था उधर आए, आ कर बोले, "हे स्वामिन् ! आज धारिणी रानी सूखी भूखी आर्तप्यान में बैठी हुई कुछ सोच रही है ।"

- १५ तब वह श्रेणिक राजा जिधर धारिणी थी उधर आया, और उस से पूछा, 'हे देवताओं की प्यारी ! आर्तध्यान में बैठी हुईं तुम क्या सोच रही हो ?'
- तब वह धारिणी रानी बोली, "हे स्वामिन् ! मुझ को इस प्रकार का अकाल मेघों में दोहला उत्पन्न हुआ है ।"
- १६ तब वह श्रेणिक राजा धारिणी रानी को बोला, "हे देवताओं की प्यारी ! तुम आर्तध्यान मत ध्याओ, मैं ऐसा यत्न करूंगा जिससे कि तुम्हारे इस अकाल दोहले की मनोरथ संपत्ति हो जावेगी ।"
- १७ तब उस श्रेणिक राजा ने अभय नाम कुमार को बुला कर कहा, "हे पुत्र ! तेरी सौतेली माता धारिणी रानी को अकाल मेघों के विषय दोहला उत्पन्न हुआ है । उपायों द्वारा उस दोहले की पूर्ति को न देखता हुआ दृष्टे हुए मन के संकल्प वाला मैं इस फिकर में हूँ ।"
- १८ तब वह अभयकुमार श्रेणिक राजा को ऐसे बोला कि "हे पिता जी ! आप यह फिकर मत करें । मैं ऐसा यत्न करूंगा जिससे कि मेरी सौतेली माता धारिणी रानी के अकाल मेघों में दोहले की मनोरथ संपत्ति हो जाये ।"
- १९ तब उस अभय कुमार के मन में इस प्रकार का संकल्प उठा, "निश्चय है कि मेरी सौतेली माता धारिणी रानी के अकाल मेघों के दोहले की मनोरथ संपत्ति दिव्य उपाय के बिना मानुषिक उपाय से नहीं हो सकती । मेरा पूर्वजन्म का मित्र सौम्य कल्पवासी देवता यड़ी ऋद्धि संपत्ति वाला है । इसलिये मुझे मुनासिब है कि पोपध-शाला में पोपध लेकर ब्रह्मचर्य धारण करके अकेला, बिना किसी दूसरे साथी के, दर्भ के संधारे पर बैठा हुआ, अष्टम भक्त का व्रत ग्रहण करके, पूर्व जन्म के मित्र देवता को मन में याद करता हुआ बैठा रहूँ, तब वह पूर्व जन्म का मित्र देवता मेरी सौतेली माता धारिणी देवी के अकाल मेघों में दोहले को पूर्ण करेगा ॥"
- इस प्रकार विचार करके पोपधशाला में भाड़ दिया, पाखाने पेशाय की जगह अर्थात् टट्टी को साफ़ किया, दर्भ के संधारे पर बैठे,

अष्टम मनुष्य को दूत ले, पूर्व जन्म के मित्र देवता को मन में याद करता हुआ रहने लगा ॥

२० तब वह पूर्व जन्म का मित्र देवता अमयकुमार के पास प्रकट हुआ और उसने अमयकुमार की प्रार्थना पर अकाल मेंघों को विकुर्या ।

२१ तब उस घारिणी रानी ने अकाल मेंघों में अरने दोहले को सम्यक् प्रकार पूर्ण किया और नौ गर्हने पूरे होने पर उसके मेंघ नामा बालक पैदा हुआ ॥

तब उस मेंघ कुमार के माता पिता ने क्रम पूर्वक नामकरण पैत्र-मण्य, पयचकमण्य और मुण्डन संस्कार यही श्रद्धि के साथ किये ।

२२ तब मेंघकुमार के माना पिता उसको गर्भ से आठवें साल में शुभ तिथि करण मुहूर्त में कला आचार्य के पास लेगए । तब उस कला-आचार्य ने मेंघकुमार को लेखनादि, गणित ई प्रधान जिन में पेरसी यहत्तर कलाएँ सूत्र सहित, अर्थ सहित तथा क्रिया सहित सित-सार्ह जैसे १ लिखना, २ गणित, ३ रूप, ४ मूल्य, ५ गीत, ६ याजन्तर, ७ स्वर्गान, ८ डोलक, ९ छेने ( समताल ), १० जूआ, ११ पद्याने, १२ सार पासा, १३ अष्टापद ( चौपड़ ), १४ नगर घनाना, १५ पानी मिट्टी मिलाना, १६ अन्न विधि, १७ पान विधि, १८ वस्त्र विधि, १९ विलेपन विधि, २० शयन विधि, २१ आर्या छन्द घनाना, २२ प्रदे-लिका, २३ मागधी रचना, २४ स्त्री लक्षण, २५ गाथा रचना, २६ गीति रचना, २७ श्लोक रचना, २८ हिरण्य जड़ना, २९ सुवर्ण जड़ना, ३० चूनियों जड़ना, ३१ आभरण विधि, ३२ तरणी प्रतिफल अर्थात् युवतियों को धेप रचना, ३३ पुष्ट लक्षण, ३४ घोड़े के लक्षण, ३५ हस्ति लक्षण, ३६ गाय के लक्षण, ३७ कुम्हण्ड लक्षण, ३८ छत्र लक्षण, ३९ दरद लक्षण, ४० तलवार के लक्षण, ४१ मणियों के लक्षण, ४२ कौड़ियों के लक्षण, ४३ वास्तु विद्या ( घर घनाना ) .

७ बालक को अन्न खिलाता ।

८ बालक को चङ्गलि पकड़ कर घनाना ।

९ रूप के तीन चर्चे टोका कारों ने किये हैं १ नांग भरना २ चित्र बनाना ३ कपड़े धोने को परगना ।

४४ सेना के डेरों का माप, ४५ नगर का माप, ४६ व्यूह रचना, ४७ प्रति व्यूह रचना, ४८ चार रचना, ४९ प्रतिचार रचना, ५० धक्र व्यूह रचना, ५१ गरुड व्यूह रचना, ५२ शकट व्यूह रचना, ५३ युद्ध, ५४ नियुद्ध, ५५ युद्धायुद्धी, ५६ हड्डियों<sup>१०</sup> का युद्ध, ५७ मुष्टि युद्ध, ५८ भुजा का युद्ध, ५९ लता का युद्ध, ६० बाण चलाना, ६१ तलवार चलाना, ६२ धनुर्वेद, ६३ हिरण्य पाक, ६४ सुवर्ण पाक, ६५ धागों का खेल, ६६ बट्टों का खेल, ६७ नालिका का खेल, ६८ पत्तों पर चित्र खोदना ६९ कड़ों पर चित्र खोदना, ७० सज्जीव<sup>११</sup>, ७१ निज्जीव<sup>१२</sup>, ७२ शकुन विचार ( पक्षियों का स्वर ) ॥१३

तब यह कलाग्राचार्य मेघ कुमार को कलाएं सिखा कर माता पिता के पास लाया ।

२३ तब मेघ कुमार के माता पिता ने उस कला आचार्य का मधुर वचनों से और बहुत जे सुगन्धित माल्यालंकारों से सत्कार किया और बहुत सा जीवित के अनुसार प्रीति दान देकर विसर्जन किया ।

तब यह मेघकुमार बहस्र कला में परिणत होगया; सोए हुए उस के नौ<sup>१४</sup> अङ्ग जाग पड़े और वह अठारह प्रकार की देशी भाषाओं में विशारद ( चतुर ) हो गया ।

२४ तब उस मेघकुमार के माता पिता ने शुभ तिथि करण मुहूर्त में मेघकुमार का अपने जैसे राज कुलों में से लार्ह हुई आठ राज कन्याओं के साथ विवाह कर दिया ।

२५ तब ( एक दिन ) यह मेघकुमार उत्तम प्रासाद के ऊपर बैठा हुआ, यजते हुए मृदङ्गों के साथ, तथा उत्तम युवतियों द्वारा

१० कूहनी या मुक्के मार के लड़ना ।

११ मरे हुए को जीवित करना ।

१२ जीने हुए को मुरदा या धनाना ।

१३ इन ७२ कलाओं की विस्तार में व्याख्या कहीं नहीं मिलती ।

१४ दो हाथें, दो कान, दो नागिका, जिह्वा तथा और मन ॥ ( टीका )



सुकुत पचीस प्रकार के नाटकों के साथ बहलाया जाता हुआ अनेक काम भोगों को अनुभव कर रहा था ।

२६ उस काल उस समय में श्रमण भगवान् महावीर आगे ही आगे चलते हुए, ग्राम ग्राम फिरते हुए, सुख पूर्वक विहार करते हुए जिधर राजगृह नगर में गुणशिलक चैत्य था उधर आए ।

२७ तब उस मेघकुमार ने कंचुकी के पास से श्रमण भगवान् महावीर के आने का हाल सुनकर दृष्ट तुष्ट हो कर घर के नौकरों को बुला कर कहा, "शीघ्र ही हे देवताओं के प्यारो! चार घंटियों वाला घोड़ों का रथ जोड़ कर यहां लाओ ।

२८ तब वह मेघकुमार चार घंटियों वाले घोड़ों के रथ पर चढ़ा हुआ जिधर श्रमण भगवान् महावीर थे उधर आया यावत् विनय के साथ बैठ गया । तब श्रमण भगवान् महावीर ने मेघकुमार को और उस बड़ी परिपदा को विचित्र धर्म का उपदेश किया ।

२९ तब मेघकुमार श्रमण भगवान् महावीर के पास से धर्म सुन कर दृष्ट तुष्ट हुआ और माता पिता की आर आया, आकर माता पिता को पालागन किया और बोला, "हे माता पिता जी ! मैंने श्रमण भगवान् महावीर के पास से धर्म सुना है और वह धर्म इष्ट और दृचिकर है । इस लिये हे माता पिता जी ! आप से आज्ञा पाकर श्रमण भगवान् महावीर के पास मुण्डित होकर गृहस्था से साधु बनना चाहता हूं ।"

३० तब वह धारिणी रानी उस अनिष्ट अक्रान्त और अप्रिय वचन को सुन कर ताप करती हुई, सोच करती हुई और रोती हुई यूं बोली, "हे पुत्र ! तू हमारा एक ही लड़का है जो इष्ट, कान्त और प्रिय है । हे पुत्र ! हम तेरा वियोग एक क्षण मात्र भी नहीं सह सकें ! इसलिये हे पुत्र ! जब तक हम जीते हैं मानुष भोगों को भोगो । इस के पश्चात् जब हम काल कर जायें तब पक्की उमर में निरपेक्ष धीक्षा ले लेना ।"

३१ तब वह मेघकुमार माता पिता के यह वचन सुन कर बोला, "हे माता पिता जी ! जो कुछ आप मुझे कहते हैं सो ठीक है । परन्तु हे माता पिता जी ! यह मानुष भव अधुष है, अनियत है,

अनित्य है, सैफड़ों वयसन और उपद्रवों से अभिभूत, विजली की तरह चंचल, अनित्य है, जलविन्दु की तरह लोल और चपल है, कुशा के अग्र भाग में लगे हुए विन्दु के समान ( सद्यः पाति ) है, सन्ध्या के मेघों की लाली की तरह ( विनश्चर ) है, स्वप्न की तरह ( मिथ्या ) है, पीछे घा पहिले अग्रश्य ही छोड़ना पड़ेगा । हे माता पिता जी ! कौन जानता है कि किस ने पहिले जाना है, किस ने पीछे जाना है, इस लिये मैं यावत् दीक्षा लेना चाहता हूँ ।” तब जय उस मेघकुमार के माता पिता विषयानुकूल अनेक समझौतियों और उपदेशों द्वारा मेघकुमार को समझा न सके तब वह विषयों के प्रतिकूल और संमय में भय और उद्देग कराने वाले उपदेशों के द्वारा इस प्रकार बोले, “हे पुत्र ! यह जो निर्ग्रन्थों का प्रवचन है सो सध्या है, अनुत्तर है, फेंवली प्रणीत है, परिपूर्ण है, शुद्ध है, (शंका रूपी) शक्तियों को काटने वाला है, सिद्धि का मार्ग है, मुक्ति का मार्ग है, सब दुःखों से रहित यह मार्ग है, सर्प की न्याई एकान्त दृष्टि वाला है, उस्तरे की न्याई एक धार वाला है, लोहे के दाने चवाने की न्याई ( कलिन ) है, रेत के ग्रास की न्याई नीरस है, गङ्गा नदी के प्रवाह के प्रतिकूल जाने की तरह मुश्किल है, महा समुद्र की तरह भुजाओं करके दुस्तर है, तलवार की धार के ऊपर चलने की तरह है । हे पुत्र ! श्रमण निर्ग्रन्थों को आधाकर्मा आहार, उद्देशिक आहार, ( साधु के निमित्त ) धरीदा हुआ या घनाया हुआ, ( दूर ) रखला हुआ, सजाया हुआ, दुर्भिक्ष<sup>१५</sup> का आहार, बहलिय<sup>१६</sup> आहार, कान्तार<sup>१७</sup> आहार, योमार साधु का भोजन, मूल, कन्द, फल, बीज या हरी का भोजन खाना पीना नहीं कहपता । तू तो हे पुत्र ! सुखों में पला है दुःखों से यहिकूल अनभिष है । तू सरदी को, गरमी को, भूक को, प्यास को, घात पित्त तथा संनिपात के अनेक प्रकार

१५ दुर्भिक्ष पड़ने पर जो भूखों को अन्न बांटा जाता है ॥

१६ बरखा न होती तो लोग अन्न दान करते हैं ताकि बरखा हो जाए, ऐसा अन्न ॥

१७ अंगल या अटंवि में जाते हुए अधिक जो अन्न अपने साथ ले जाते हैं ॥

के रोग आतकों को, छोटे बड़े इन्द्रियों के दुःखों को, पाप हुए पापोंस उपानर्ग और परीपहों को अच्छी तरह सहन करने के समर्थ नहीं है। इसलिये हे पुत्र ! तब तक भागो यापत् दीक्षा ले लेना ।

३३ तब यह मंगकुमार मात पिता के ऐसा कहने पर बोला, "हे माता पिता जी ! जो कुछ आप मुझे कहते हैं, ठीक है। बेशक कृपण, कानर, कापुरुष, इस लोक में प्रतिपन्न और परलोक से विमुक्त ऐसे प्राकृत जन के लिये निर्मन्थों का धर्म पालना बहुत कठिन है परन्तु धीरे धीरे को इसे पालना कुछ कठिन नहीं। इस लिये मैं चाहता हूँ यापत् दीक्षा ले लूँ।

३४ तब मंगकुमार के माता पिता उभे यूँ बोले "हे पुत्र ! हम तेरी एक दिन की भी राज्यधी देखना चाहते हैं ( अर्थात् तू राजा बन जा, चाहे एक ही दिन राज करना )।"

तब मंगकुमार श्रुत हो गया ।

३५ तब उस धेरिक राजा ने घर के नौकरों को बुला कर यूँ कहा, "हे देवताओं के प्यारो ! मंगकुमार का बहुत धन धौलत के साथ गृध्र राज्याभिषेक करो।"

तब उन घर के नौकरों ने जैसे ही किया ।

३६ तब यह धेरिक राजा बहुत से गणनायक तथा दण्डनायकों से घिरा हुआ मंगकुमार को एक सौ आठ सुवर्णमयी घड़ों के जल से राज्याभिषेक के तौर पर नहलाता हुआ बोला, "हे नन्द ! तुम्हारी जय हो। हे मद्र ! तुम्हारी जय हो। तुम्हारा कल्याण हो। न जाते हुए ( देश ) को जीनो। जाते हुए ( देश ) को पालो। जीते हुए ( देश ) के बीच में रहो" उस ने इस प्रकार जय शब्द का प्रयोग किया ।

तब वह मेघ ( कुमार ) राजा हो गया ।

३७ तब उस मेघराजा के माता पिता बोले, "कहो बेटा ! क्या तुम्हें देवें ?"

तब वह मेघ राजा माता पिता से ऐसे बोला "हे —"

जी ! मैं कुत्रिक<sup>१८</sup> की दुकान से रजोहरण और उपकरणों<sup>१८</sup> को मंगवाना तथा नाई को बुलवाना चाहता हूँ ।”

३८ तब उस श्रेणिक राजा ने नौकरों को बुला कर कहा “हे देवताओं के प्यारे ! तुम जाओ, राजाने में से तीन लाख (रुपये या मुहरें) ले कर दो लाख से कुत्रिक की दुकान से रजोहरण और उपकरण ले आओ, और एक लाख से नाई को बुला लाओ ॥

तब उन नौकरों ने घंसा ही किया ॥

३९ तब उस नाई ने श्रेणिक राजा को हाथ जोड़ कर कहा, “हे स्वामिन् ! श्राद्धा करिये, मुझे क्या करना है ।”

तब उस श्रेणिक राजा ने नाई को कहा, “हे देवताओं के प्यारे ! जाओ, तुम सुगन्धित पानी से अपने हाथ पाओं धोओ । सफेद चौदरे कपड़े से मुंह को बांध कर मेघकुमार के चार अङ्गुल छुंड़ कर निष्कमण<sup>२०</sup> के लिये केशों को काटो ॥”

तब उस नाई ने उसी प्रकार केशों को काटा ॥

४० तब मेघकुमार की माता ने कौमती हंसचित्रित कपड़े के टुकड़ों में अगले केशों को लिया, सुगन्धित पानी से धोया, सरस गोशीर्ष चन्दन के छीटे दिये—देकर सफेद कपड़े में बांधा और रत्नमय डब्बे में डाल दिया । पानी की धारा अथवा टूटी हुई मोतियों की माला के प्रकाश वाले आंसुओं को बहाती हुई, रोती हुई, विलफती हुई यूँ बोली “मेघकुमार का जलसों में तेहवारों में हमें यह अन्तिम<sup>२१</sup> दर्शन होगा” यह कह कर ( बालों को ) सिरहाने के नीचे रख लिया ॥

४१ तब मेघकुमार के माता पिता ने उत्तर को ढलवां एक सिंहासन बनवाया, मेघकुमार को दो तीन चार सफेद और पीले घड़ों से नहलाया, उस के अङ्गों को बुरदार कोमल सुगन्धित रंगदार तौलिये से पोंछा, सरस गोशीर्ष चन्दन के साथ अङ्गों पर लेप

१८ देवताओं की ऐसी दुकान जिस में तीन लोक को चीजे मिल सकती हैं ॥

१८ पात्र, वस्त्र आदि ।

२० संसार से निकलना ॥

२१ अपच्छिन्न = न अन्तिम । शुभ अथवा होने में परिचय 'आगिरी' के लिये अपच्छिन्न 'न आगिरी' कहा है ॥

कियां और नाक की सांस की हवा से उड़ जाने वाला हंसधित्रित कपड़ा उसे पहनाया, हार, अर्धहार, इमी प्रकार एकलड़ी मोतियों की माला, सुनहरी माला, रत्नों की माला, पाचन् दिव्य फूलों की माला उसे पहनाई ।

४२ तब मेघकुमार को प्रणिमन्<sup>२२</sup>, वेष्टिमन्<sup>२३</sup>, पूरिमन्<sup>२४</sup> और सांयोगिक<sup>२५</sup> इन चार प्रकार के फूलों के भूषणों से कल्पवृक्ष की तरह अलंकृत शरीर वाला कर दिया ।

४३ तब उस श्रेणिक राजा ने घर के नौकरों को बुला कर कहा, "हे देवताओं के प्यारो ! सैकड़ों स्तम्भों वाली और हजार आदमियों करके उठाए जाने के योग्य ऐसी शिथिका अर्थात् पालकी लाओ । तब यह घर के नीकर पालकी ले आये ।

४४ तब यह मेघकुमार पालकी में चढ़ कर उत्तम सिंहासन के ऊपर पूर्व की ओर मुंह करके बैठ गया ।

४५ तब उस मेघकुमार की माता ध्यान करके, यज्ञिकर्म करके, धोड़े और बहुत मोल वाले भूषणों से अपने शरीर को अलंकृत करके पालकी में चढ़ी और मेघकुमार के दाईं तरफ सिंहासन पर बैठ गई ।

४६ तब मेघकुमार के पिता ने घर के नौकरों को बुला कर कहा, "हे देवताओं के प्यारो ! एक जैसे, समान रूप और समान वय वाले ऐसे घर के नौकरों में से एक हजार उत्तम युवकों को बुला लाओ ।"

तब यह बुलाए हुए उत्तम युवक श्रेणिक राजा को कहने लगे, "हे स्वामिन् ! हमें आशा दीजिए कि हमें क्या करना है ।"

तब यह श्रेणिक राजा उन उत्तम युवकों को बोला कि, "हे देवताओं के प्यारो ! मेघकुमार की हजार आदमियों करके उठाने योग्य पालकी को उठाओ ।" उन्होंने ने वैसे ही उठा ली ।

४७ तब मेघकुमार के पालकी में चढ़ जाने पर यह आठ मंगलक सय से पहिले उस के आगे चले जैसे स्वस्तिक<sup>२६</sup>, श्रीवत्स<sup>२७</sup>, नन्दा-वर्त<sup>२८</sup>, वर्द्धमानक<sup>२९</sup>, भद्रासन, कलश, मत्स और दर्पण ।

२२ फूलों के भूषण बनाने के प्रकार विशेष ॥

२३ साधिया, साधिया ॥

२४ साधिये की भांति के साकार विशेष ॥

तब बहुत से धन के अर्थां (फूफ़ीर, भिखारी) इष्ट और कान्त मीठे वचनों से लगातार उसकी स्तुति करते हुए यूँ बोले, "हे नन्द ! आप की जय हो । हे भद्र ! आप की जय हो ।"

४८ तब मेघ कुमार के माता पिता मेघ कुमार को आगे करके जिधर श्रमण भगवान् महावीर थे उधर आप, तीन धार आदक्षिण प्रदक्षिणा की और यन्दना नमस्कार करके बोले, "हे देवताओं के प्यारे ! यह हमारा एक ही पुत्र इष्ट, कान्त, और प्रिय है । जैसे उत्पल या पद्म या कमल कीचड़ में उत्पन्न होता है और जल में घुड़ि पाता है लेकिन कीचड़ की रज से नहीं लिपड़ता इसी प्रकार मेघकुमार कामोन्मत्त में उत्पन्न हुआ, भोगों में पला, तौ भी भोगों का मैल से नहीं लिपड़ा । हे देवताओं के प्यारे ! यह संसार के भय से उद्विग्न, जन्म, जरा और मरण से डरा हुआ, आप के पास मुण्डित होकर गृहस्थी से साधु बनना चाहता है । इस लिये हम आप का शिष्य की भित्ता देते हैं । आप शिष्य-भित्ता को स्वीकार करें ।"

४९ तब श्रमण भगवान् महावीर ने मेघकुमार के माता पिता के ऐसा कहने पर उन की प्रार्थना को अच्छी तरह स्वीकार किया ।

५० तब वह मेघकुमार श्रमण भगवान् महावीर के पास से पूर्वोत्तर दिशि में गया और स्वयं ही आभरण अलंकारों को उतारा ।

५१ तब मेघकुमार की माता ने हंस चित्रित कपड़े के टुकड़े में आभरण अलंकारों को लिया और आंसू गिराती हुई और रोती हुई यूँ बोली, "हे पुत्र ! तुमने यत्न करना । तुम ने कोशिश करनी । इस विषय में प्रमाद नहीं करना । हमारा भी यही रास्ता होवे," यह कह कर मेघ कुमार के माता पिता ने श्रमण भगवान् महावीर को यन्दना नमस्कार किया और फिर जिस तरफ से आप थे उसी तरफ चले गए ।

५२ तब मेघकुमार पांच मुष्टि<sup>२६</sup> लोच करके श्रमण भगवान् महावीर की ओर आकर बोला, "हे महाराज ! यह संसार जरा और मरण से लित है । जैसे कोई गृहपति घर में आग लगने पर

जो वस्तु थोड़े भार वाली और बहुत मोल वाली होती उसे लेकर अपनी जान के साथ एक तरफ चला जाता है कि यह वस्तु निकाली हुई आगे पीछे इस लोक में हितकर और सुख कर होगी ; इसी प्रकार मुझे भी चारित्र्य रूपी वस्तु इष्ट कान्त और प्रिय है, यह बचाया हुआ संसार का नाश करने वाला होगा । इस लिए मैं चाहता हूँ कि मुझे आप ही स्वयं दीक्षा दें, स्वयं शिक्षा दें, स्वयं आचार, गोचरी, धिनय, चरण, करण, यांत्रा, मात्रा की वृत्ति रूप धर्म का उपदेश करें ।”

तब धमण भगवान् महावीर ने मेघकुमार को स्वयमेव दीक्षा दी यावत् स्वयमेव धर्म का यूँ उपदेश दिया, “हे देवताओं के प्यारे ! इस प्रकार चलना चाहिये, इस प्रकार ठहरना चाहिये, इस प्रकार बैठना चाहिये, लेटना चाहिये, खाना चाहिये, बोलना चाहिये ।”

जिस दिन मेघकुमार गृहस्त्री से साधु बना, उस दिन पिछले प्रहर के पूर्व भाग में श्रमण निर्ग्रन्थों के यथायोग्य शय्या संस्तारफ बाँटने पर मेघकुमार का द्वार के मूल में ( अर्थात् देहली के पास ) शय्या संस्तारफ हुआ ।

तब श्रमण निर्ग्रन्थ रात्रि के पहिले प्रहर के पिछले भाग में धाचने के लिये या पूछने के लिये या पाखाना पेशाब के लिये आते जाते हुए कोई मेघकुमार के हाथों से टकराता था इसी प्रकार पैरों से, सिर से, पेट से, शरीर से । इस तरह उस सारी रात भर मेघकुमार एक क्षण भर भी आँखें बन्द न कर सका ( अर्थात् सो न सका ) ।

तब मेघकुमार को इस प्रकार का ख्याल आया, मैं श्रेणिक राजा का पुत्र, धारिणी रानी का आत्मज, मेघकुमार हूँ । जब मैं घर में रहता था तब मुझे जो श्रमण निर्ग्रन्थ आदर सत्कार देते थे । लेकिन जब से मैं साधु बना हूँ तब से लेकर श्रमण निर्ग्रन्थ न मुझे आदर देते हैं न सत्कार करते हैं बल्कि श्रमण निर्ग्रन्थ रात्रि के पहिले प्रहर के पिछले भाग में यावत् मुझे से टकराते रहे, और मैं क्षण भर भी आँखें बन्द न कर सका । इस

लिये मुझे मुनासिब है कि कल रात्रि के ( रीतने पर ) प्रभात हो जाने पर ध्रमण भगवान् महावीर की आज्ञा लेकर फिर घर में रहूँ ।” यह निश्चय करके आर्त ध्यान के घण्टी बजाने वाले उस ने नरक जैसी उस रात को पिताया और अगले दिन रात के ( रीतने पर ) प्रभात होने पर जिधर ध्रमण भगवान् महावीर थे उधर आया यावत् बैठ गया ।

७ तब ध्रमण भगवान् महावीर मेघकुमार को “हे मेघ !” ऐसा कह कर बोले, “निश्चय करके तू रात्रि के पहिले पहर के पिछले भाग में ध्रमण निर्ग्रन्थों द्वारा घाचना के लिये या पूछने के लिये यावत् घर में रहूँ<sup>२७</sup> । क्या यह बात ठीक है ?”

“हे भगवन् ! यह बात ठीक है ।”

“हे मेघ ! इस से पहिले तीसरे जन्म में तू चैताढ्य-पर्वत के पाद मूल में हाथियों का राजा था । वहाँ पर एक दफा गरमी की मौसिम के समय जेठ<sup>२८</sup> के महीने में दायानल<sup>२९</sup> की ज्वालाओं से जंगलों के आलित होने पर तथा दिशाओं के धूमाकुल होने पर यावरोले की तरह घूमता हुआ, डरा हुआ और भयभीत तू बहुत से हाथियों से घिरा हुआ एक दिशा से दूसरी दिशा में दौड़ता फिरता था ।

५८ तब उस दायानल को देखकर हे मेघ ! तुझे यह ख्याल आया “मैं समझता हूँ कि मैंने इस प्रकार की अग्नि का उत्पाद कहीं न कहीं पहिले देखा हुआ है ।” तब हे मेघ ! लेश्या के शुद्ध होने से, परिणाम शुभ होने से, तथा उस ( जातिस्मरण ) के आघरणीय फलों के लयोपशम होने से तुझे जातिस्मरण ज्ञान पैदा होगया । तब हे मेघ ! तूने इस बात को अच्छी तरह समझा “सचमुच मैंने पिछले जन्म में इस प्रकार की अग्नि का उपद्रव देखा है ।”

५९ तब हे मेघ ! तुझे यह ख्याल आया, “इसलिये मुनासिब है कि

<sup>२७</sup> देखो पिछला सूत्र ।

<sup>२८</sup> चर्मात् जिस मास की पूर्णिमा का चांद ज्येष्ठा वा मृगशिरा नक्षत्र में रहता है ।

<sup>२९</sup> जंगल की भाग जो बाँसों वगैरह की रगड़ से स्वयं प्रगट हो जाती है ।



अब मैं गंगा महानदी के दक्षिण तीर पर विन्ध्या पर्वत के प्राद-  
मूल में दाधानल से बचने के लिये अपने यूथ<sup>३०</sup> के साथ एक  
बड़ा घेरा<sup>३१</sup> डाल लूँ।" यह निश्चय करके तूने एक बड़ा घेरा  
डाला । जहाँ जहाँ तृण, पत्र, काष्ठ, कण्टक घेलें, डुण्ड या वृक्ष थे  
यह सब तूने तीन बार हिला कर पाशों के साथ उखाड़ डाले  
और सूँड़ के साथ पकड़ कर एक तरफ फेंक दिये ।

तब तू हे मेघ ! उसी मण्डल ( घेरे ) के निकट हाथियों का  
राज्य भोगता हुआ रहने लगा ।

६० तब एक दफा गरमी की मौसिम के समय जेठ के महीने में वृष्टों  
के संघर्ष से उठी हुई, सूखे तृण, पत्ते और हवा के सयोग से दीप्त  
हुई दाधानल की ज्वालाओं से जंगलों के भर जाने पर बहुत से  
दूसरे सिंह, व्याघ्र ( शेर ), रीछ, चीते, गीदड़ और शशक,  
जिधर वह तेरा मण्डल था उधर आए और अग्नि के भय से डरे  
हुए एक बिल घासियों<sup>३२</sup> के धर्म से रहने लगे । तू भी हे मेघ !  
उसी मण्डल में उन बहुत से सिंह यायत् शशकों के साथ एक ही  
बिल घासियों के धर्म से रहने लगा ।

६१ तब तूने हे मेघ ! इस ब्याल से कि पैर से अपने शरीर को खुज-  
लाऊँ एक पैर उठाया । उस अन्तर<sup>३३</sup> ( जगह, स्थान ) में दूसरे  
घरवान् जन्तुओं से भीचा हुआ एक शशक आगया ।

तब हे मेघ ! शरीर का खुजला कर फिर जब तू पैर नीचे  
रखने को था तो तूने उस ( अन्तरे में ) आए हुए शशक को देखा  
और प्राणियों की अनुकंपा से, जीवों की अनुकंपा से तूने वह पैर  
आकाश में ही उठाए रफवा, ( पृथ्वी पर ) नहीं टिकाया ।

तब हे मेघ ! उस प्राणों की अनुकंपा से तूने मनुष्य आयु का  
बन्ध किया ।

३० समूह ।

३१ वृष्टों को काट कर साफ की हुई जगह ताकि उसमें घास न पाए ।  
जहाँ चरान न होगा, वहाँ घास नहीं लगेगी ।

३२ अर्थात् प्रेम पूर्वक ।

पैर के ठठाने से खाली की हुई जगह ।

तब वह दावानल अढ़ाई रात दिन तक उस घन को जलाता रहा ।

तब अन्त को वह दावानल बुझ<sup>३४</sup> गया ।

६२ तब वह सारे सिंह यावत् शशक उस दावानल को बुझा देख अग्नि के भय से रहित, और भूक प्यास से सताए हुए उस मण्डल से निकल कर सब दिशाओं में भाग गए ।

६३ तब तू हे मेघ ! जीर्ण हुआ हुआ और बुढ़ापे से जर्जरित शरीर वाला उसी मण्डल में बिजली गिरने से मर कर भूमि तल पर गिर पड़ा । तब हे मेघ ! तेरे शरीर में बड़ी सख्त वेदना प्रकट हुई । तब हूँ मेघ ! तू उस सख्त वेदना को तीन दिन रात भोगता हुआ एक सी गरस की पूर्ण आयु पाल कर इसी जंबु-द्वीप भरत क्षेत्र के राजगृह नगर में श्रेणिक राजा की धारिणी रानी की कूल में कुमार पने उत्पन्न हुआ ।

६४ तब तू हे मेघ ! क्रम से गर्भवास (कूल) से निकल कर, बाल्या-घस्या को उल्लंघ कर, यौवन को प्राप्त कर मेरे पास मुरिडत हो गृहस्य से साधु बना ।

६५ तब यदि हे मेघ ! तियैच योनि में गए हुए और सम्यक्त्व रूपी रत्न को न प्राप्त किये हुए तू ने प्राणियों की अनुकंपा से वह ( अपना ) पैर आकाश में ही उठाए रफला, और ( पृथ्वी पर ) नहीं टिकाया तो क्यों फिर अब हे मेघ ! बड़े कूल में उत्पन्न हो कर, पंचेन्द्रिय पना प्राप्त कर एवं शक्ति, बल, धीर्य, पुरुषकार, पराक्रम से संयुक्त हो कर और मेरे पास दीक्षा लेकर रात को वाचना के लिये या पूढ़ने के लिये जाते ( आते ) भ्रमण निग्रन्थों के पैरों के संघट्टों को सम्यक् प्रकार नहीं सहता ?”

६६ तब भ्रमण भगवान् महावीर के पास से यह बात सुन कर परिणामों के शुभ होने से और अध्यवसायों के प्रशस्त होने से मेघ-कुमार को जाति स्मरण शान पैदा हो गया । तब उस मेघकुमार ने इस बात को अच्छी तरह संभभा ।

## अधर्मागधी रीडर ।

तब एक समय भ्रमण भगवान् महावीर ने याहिर जनपद में विहार किया अर्थात् ग्रामों में विचरने लगे ।

तब यह मेघ अनगार अनेक प्रकार की तपश्चर्याओं से अपनी आत्मा को शुद्ध करने लगा ।

तब यह मेघ अनगार बड़ी भारी तपश्चर्या से सूखा, भूखा, रुखा, निर्मासं, लहू रहित, दृश, नाड़ियों का जाल सा ही हो गया । जीव बल से चलता है, जीव बल से ठैरता है । भापा धोल कर थक जाता है । भापा धोलता हुआ थक जाता है । भापा धोलूँगा इस ख्याल मात्र से थक जाता है । जैसे कोयलों<sup>१४</sup> की भरी हुई गाड़ी, अथवा काठ से भरी हुई गाड़ी अथवा (खूबे) पत्तों से भरी हुई गाड़ी शब्द करती हुई चलती है शब्द करती हुई ठैरती है इसी प्रकार मेघकुमार भी शब्द करता हुआ चलता है, शब्द करता हुआ ठैरता है<sup>१५</sup> ।

उस काल उस समय में भ्रमण भगवान् महावीर राजगृह नगर में समांसरे ( अर्थात् पधारे ) ।

तब उस मेघकुमार को रात के पहिले प्रहर के पिछले भाग में धर्म जागरण जागते हुए यह ख्याल आया, "इस प्रकार मैं इस बड़ी तपश्चर्या से यावत् शब्द करता हुआ ठैरता हूँ । इसलिये जब तक मुझे शक्ति, बल, वीर्य, धृद्धा, धृति, संवेग है और जब तक मेरे धर्माचार्य धर्मापदेशक भ्रमण भगवान् महावीर विचरते हैं तब तक मुझे मुनासिब है कि कलहों रात के ( धीतने पर ) प्रभात हो जाने पर भ्रमण भगवान् महावीर से आशा पाकर स्वयं ही पांच महावृत्त धारण कर के, गौतम आदि भ्रमण निर्ग्रन्थों को खमा कर, तथारूप स्थविरों के साथ विपुल पर्यंत पर धीरे २ चढ़ कर स्वयं ही वादलों के समूह जैसे ( काली ) मिट्टी पत्थर के चबूतरे को साफ करके, संलेखना भूतना से शुद्ध होकर, खाना पीना छोड़ कर, मृत्यु की आकांक्षा न करता हुआ विचरूँ," ऐसा ठान कर अगले दिन प्रभात होने पर भ्रमण भग-

१४ बुके हुए पद्मार ॥

१५ शरीर की निर्बलता का कैसा अच्छा फोटो ले'वा है ॥

घन महावीर की ओर आकर तीन चार आदक्षिण प्रदक्षिणा करके यावत् बैठ गया ।

६८ तब श्रमण भगवान् महावीर मेघकुमार को यूँ बोले, “संच मुच हे मेघ ! तुझे रात्रि के पहिले पहर के पिड्डले भाग यावत् काल की आकांक्षा न करता हुआ विचरूँ<sup>३०</sup> । क्या मेघ ! यह बात ठीक है ?”

“ हां महाराज ! ठीक है ।”

६९ तब वह मेघ अनगार श्रमण भगवान् महावीर से आशा पा कर स्वयमेव पांच महाप्रतों को धारण करके यावत् मृत्यु की आकांक्षा न करता हुआ विचरने लगा ।

७० तब वह स्थविर भगवन्त मेघ अनगार की गिलानी रहित सेवा करने लगें । तब वह मेघ अनगार वारह बरस श्रमणों का चारित्र्य पाल कर, मासिकसंलेखना से आत्मा को शुद्ध करके, साठ भोजन वेलार्यों को अनशन<sup>३८</sup> से धिता कर, आलोचना प्रति क्रमण करके, ( मिथ्यात्व रूपी ) शल्य निकाल कर, समाधि को प्राप्त हो, क्रम से काल कर गया ।

७१ तब उन स्थविर भगवन्तों ने मेघकुमार को मरा हुआ देख कर मृत्यु सम्बन्धि कायोत्सर्ग किया । उस के उपकरण लेकर श्रमण भगवान् महावीर की ओर आकर यूँ बोले, “आप का शिष्य मेघ नामा अनगार जो प्रकृति से भद्र और विनीत था वह आप से आशा पाकर यावत् क्रम से काल कर गया । हे देवताओं के प्यारे ! यह मेघ अनगार के उपकरण हैं ।”

तब भगवान् गौतम श्रमण भगवान् महावीर को यूँ बोले, “हे महाराज ! यह मेघ अनगार काल मास में काल करके कहाँ गया, कहाँ पैदा हुआ ?”

“हे गौतम ! मेरा शिष्यमेघ नामा अनगार विजय महाविमान में देवता पने उत्पन्न हुआ है ।”

३० देखो पिड्डला सूत्र ।

३८ न पाना, भुके रहना ।

## अर्धमागधी रोडर ।

महाराज ' यह मेरा देवतापने में देयलोक में से कहा  
 का ? कहाँ उत्तर होगा ?'

'दे गीतम ! महा विदेह लोभ में सिद्ध होगा, युद्ध होगा, निर्घोष  
 प्राप्त करेगा, सब दुःखों का अन्त करेगा ।'

७२ इस प्रकार हे जम्बू ' धर्मण भगवान् महावीर ने स्वस्वत करती  
 हुई, अरमा को उपलम्भ देने के लिये इस पहिले ज्ञाता अध्ययन  
 का यह अर्थ कहा है । मैं यह कहता हूँ ।

॥ प्रथम अध्ययन समाप्त ॥

किसी विषय में स्वल्पित होने पर शिष्यों को आचार्य मीठे  
 और चतुर बचनों से इसी प्रकार धीरज देते हैं जैसे महावीर  
 ने मेघ मुनि को दी ॥

॥ इति श्री छाताधर्मकथाम्बु के पहिले धृतस्कन्ध का पहिला अध्ययन ॥



